

श्रीवीतरागाय नम

श्रीसुधर्मास्वामिविरचित

श्रीमद्‌उपासकदशासूत्र

(हिन्दी अनुवाद सहित)

अनुवादक–खजानची राम जैन

मत्री–श्री श्वे० स्था० जैन कुमारसभा–लाहोर

प्रकाशक–मेहरचन्द्र लक्ष्मणदास जैन

सस्कृत पुस्तकालयाध्यक्ष लाहौर (पजाब)

इन्होंने

बम्बईमें "निर्णयसागर" मुद्रणयत्रालयमे छपवाकर

प्रसिद्ध किया

(प्रथमावृत्ति १००० प्रति)

मूल्य १॥) रुपया

ई स १९१७ म नि स २४४३

Published by Meherchandra Laxmandas Jain
Sanskrit Book-Depot Lahore—Panjab



Printed by Ramchandra Yesu Shedge at the Nirnaya-sagar Press,
23, Kolbhat Lane, Bombay

समर्पण ।

जिनके अनुग्रह और उत्साह दानसे
मेरी लेखन कलाकी ओर
प्रवृत्ति हुई
और
जिनका आश्रय
मेरे लिये कल्पवृक्ष हुआ
उन
गुरुवर्य्य परमपूज्य श्री श्री १००८ स्वामी
सोहन लालजी महाराजके
कर कमलो में
हार्दिक भक्तिसे प्रेरित हो
अनुवादकद्वारा यह तुच्छ हिन्दी अनुवाद
सादर समर्पित है।

खज़ानची राम जैन
लाहौर

कृतज्ञता-प्रकाश

म जैन मुनि श्री श्री श्री १००८ श्री कालूरामजी महाराज का अत्यन्त कृतज्ञ हू जिन्हों ने लाहौरमें अपने अमूल्य समयको मेरे अर्पणकरके मुझे अति परिश्रमसे श्रीमद् उपासकदशा सूत्रको पढाया अत म सर्वज्ञदेव से सदा प्रार्थना करता हू कि आपकी धर्मबुद्धि की अतीव वृद्धि हो ताकि आप इसप्रकारके उपकार करनेमें और भी समर्थ हों ।

म सर्वगुणगणालकृत, विद्वद्रत्न, हिन्दीहितैषी माननीय श्री श्री श्री १००८ उपाध्याय आत्मारामजी महाराजका बहुत ही अनुगृहीत हू जिन्होंने अपने बहुमूल्य समयको मेरे अर्थ व्यय करके बडी सावधानीसे इस पुस्तकको आदिसे अन्ततक सशोधन किया है । आप बडे परोपकारी हैं आपने अनुयोगद्वार सूत्रका अभी हिन्दी अनुवाद करके समाज पर बडा ही उपकार किया है । जैनसिद्धात, आवश्यक सूत्र इत्यादि कई हिन्दी जैन पुस्तक आपके बनाये हुए उपलब्ध हैं । म जिनेन्द्र भगवान् से सदैव काल प्रार्थना करता हू कि आपकी दीर्घ आयु हो ताकि आप जैसे समाजहितैषी विद्वानों की कृपासे जैनसमाज उन्नतिको प्राप्त होसके ।

खजानची राम जैन

लाहौर



प्रस्तावना

प्रिय महाशय ! जैसे प्रत्येक प्राणीको अपने जीवनकी अत्यत इच्छा रहती है उसी प्रकार जीवन सुधार की इच्छा होनी चाहिये क्योंकि पवित्र जीवन औरों के लिये एक आदर्श बनजाता है उसके आश्रयसे अनेक आत्मा अपना उच्च जीवन करसक्ती हैं वस्तुत जीवन पवित्र करनेके लिये मुख्य दो उपाय हैं एक सुपुरुषों की सगति द्वितीय शास्त्राध्ययन किन्तु अबोध प्राणियों के लिये शास्त्रों में आये हुये धार्मिक इतिहासों के पठनसे विशेष लाभ होता है इतनाही नहीं किन्तु पूर्व समयके कर्तव्यों का भी भली भ्रातिसे बोध होजाता है इसी आशय से प्रेरितहोकर मैं ने अपनी शक्ति अनुसार "श्रीमद् उपासक दशाङ्ग" सूत्रका सरलहिंदीभाषामें अनुवाद किया है

यह सूत्र प्राकृत भाषामें रहने से इसका अर्थ समझने में साधारण पुरुषों को पराधीन करता था यह न्यूनता भी देखकर मैं ने इसका हिन्दी अनुवाद किया है किन्तु मुझे प्राकृत वा सस्कृतका विशेष ज्ञान नहीं है इसी लिये अर्थ करने में यदि मेरे से कोई भूल हो गई हो तो मेरी भूल की उपेक्षा करके मुझे सूचित करें जिससे कि—द्वितीयावृत्ति में वह भूल शुद्धकर दीजाय मेरा निज आशय तो इतनाही है की जैसे—आनद, कामदेव, चुलणीपिता सुरादेव, चुल्लशतकादि गृहस्थों ने अपने जीवन को पवित्र बनाया है उसीप्रकार सर्व सद्धर्मावलम्बी गृहस्थ अपने जीवन को पवित्र बनाये जैसे आनन्दादि श्रमणोपासकों ने धनके तीन भाग करके केवल तीसरे भागसे ही व्यापार किया है उसी प्रकार यदि इसका अनुकरण हमारे भ्रातृगण



प्रस्तावना

प्रिय महाशय ! जैसे प्रत्येक प्राणीको अपने जीवनकी अत्यत इच्छा रहती है उसी प्रकार जीवन सुधार की इच्छा होनी चाहिये क्योंकि पवित्र जीवन औरों के लिये एक आदर्श बनजाता है उसके आश्रयसे अनेक आत्मा अपना उच्च जीवन करसकी हैं वस्तुत जीवन पवित्र करनेके लिये मुख्य दो उपाय हैं एक सुपुरुषों की सगति द्वितीय शास्त्राध्ययन किन्तु अबोध प्राणियों के लिये शास्त्रों में आये हुये धार्मिक इतिहासों के पठनसे विशेष लाभ होता है इतनाही नहीं किन्तु पूर्व समयके कर्तव्यों का भी भली भ्रातिसे बोध होजाता है इसी आशय से प्रेरितहोकर मैं ने अपनी शक्ति अनुसार "श्रीमद् उपासक दशाङ्ग" सूत्रका सरलहिंदीभाषामें अनुवाद किया है

यह सूत्र प्राकृत भाषामें रहने से इसका अर्थ समझने में साधारण पुरुषों को पराधीन करता था यह न्यूनता भी देखकर मैं ने इसका हिन्दी अनुवाद किया है किन्तु मुझे प्राकृत वा सस्कृतका विशेष ज्ञान नहीं है इसी लिये अर्थ करने में यदि मेरे से कोई भूल हो गई हो तो मेरी भूल की उपेक्षा करके मुझे सूचित करें जिससे कि—द्वितीयावृत्ति में वह भूल शुद्धकर दीजाय मेरा निज आशय तो इतनाही है की जैसे—आनद, कामदेव, चुलणीपिता सुरादेव, चुल्लशत्तकादि गृहस्थों ने अपने जीवन को पवित्र बनाया है उसीप्रकार सर्व सद्धर्मावलम्बी गृहस्थ अपने जीवन को पवित्र बनाये जैसे आनन्दादि श्रमणोपासकों ने धनके तीन भाग करके केवल तीसरे भागसे ही व्यापार किया है उसी प्रकार यदि इसका अनुकरण हमारे भ्रातृगण

करें तो उनसे कभी भी कष्टों का मुख न देखना पड़े और ना ही चिन्ता ओं से मनसे व्याकुलता होवे शिवनदा भार्या की तरह प्रत्येक पत्नीको धर्मसहायक होना चाहिये और पतिव्रता धर्ममें दृढ होना चाहिये इत्यादि शिक्षा इस सूत्रसे प्राप्त होती है

यद्यपि जैनोंके अलभ्य शिक्षा विधायक और धर्मग्रंथ उपलब्ध हैं और उनमें असंख्य युक्तियोंद्वारा मोक्ष प्राप्तिके उपायोंका वर्णन किया गया है किंतु यह सूत्र श्री सुधर्मा स्वामिकृत गृहस्थधर्ममें दीक्षित होनेवालों के लिये अत्यन्त उपयोगी है इसलिये समस्त सनातन जैन धर्माभिमानी विज्ञ लोगों को चाहिये कि इस अत्यन्त प्रामाणिक, प्रतिष्ठित "श्रीमद् उपासकदशाङ्ग" को आद्यन्त अवलोकन करें जहां तक मेरे से हो सका है मैं ने मूल आशयको दूषित होने नहीं दिया इसलिये इस अनुवाद के साथ मूलभी मुद्रित किया गया है जिससे कि प्राकृत सूत्र पठन करनेकी शैली फिर जागृत हो और सामायिकादि करके इस सूत्रके स्वाध्यायसे श्रावक जन अपने कालको सफल करें।

मुझे पूर्ण आशा है कि मेरे इस परिश्रम को देखकर मेरे स्वधर्मी भाई मेरे उत्साह को बढावेंगे जिससे कि मैं और भी किसी सूत्रके अनुवाद करनेमें उत्साहित हूंगा और श्रीसंघकी सेवा करने का मुझे और भी सौभाग्य प्राप्त होगा ।

विज्ञेषु किं बहुना

भवदीय

खजानची राम जैन

सत्तमं अङ्गं

सातवा अङ्ग

उवासग दसाओ

उपासक दशा



पढमं अज्झयणं

प्रथम अध्याय

तेणं कालेणं तेणं समएणं चम्पा नाम नयरी होत्था । वण्णओ । पुण्णभद्दे चेइए । वण्णओ ॥ १ ॥

उस काल, (जिस काल भगवान् महावीरजी विद्यमान थे) उससमय चम्पा नामा एक नगरी थी (वण्णओ) उसमें पूर्णभद्र उद्यान था (वण्णओ) जिसका विवर्ण उववाई सूत्रानुसार जानना चाहिए ॥ १ ॥

तेण कालेण तेण समएण अज्जसुहम्मे समोसरिए जाव जम्बू पज्जुवासमाणे एव वयासी । "जइ णं, भन्ते, समणेणं भगवया महावीरेण जाव सम्पत्तेण छट्ठस्स अङ्गस्स नायाधम्मकहाणं अयमट्ठे

सत्तमस्स ण, भन्ते, अङ्गस्स उवासगदसाण समणेण जाव सम्पत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते?" ।

एव खलु, जम्बू, समणेण जाव सम्पत्तेण सत्तमस्स अङ्गस्स उवासगदसाण दस अज्झयणा पण्णत्ता । त जहा । आणन्दे । १ । कामदेवे य । २ गाहावइ चुलणीपिया । ३ । सुरादेवे । ४ । चुल्लसयए । ५ । गाहावइ कुण्डकोलिए । ६ । सद्दालपुत्ते । ७ । महासयए । ८ । नन्दिणीपिया । ९ । सालिहीपिया । १० ।

"जइ ण, भन्ते, समणेण जाव सम्पत्तेण सत्तमस्स अङ्गस्स उवासगदसाण दस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स ण, भन्ते, समणेण जाव सम्पत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते?' ॥ २ ॥

उसकाल, उससमय पूज्य (आर्य) सुधर्म्मा स्वामी जी वहा पधारे (यावत्) जम्बू स्वामीजी (उनकी) सेवा भक्ति करके इस प्रकार बोले । "यद्यपि, हे भगवन्, श्रमण भगवान् वीरजीने (जो मोक्षको प्राप्त होगये हैं) छटे अङ्ग (नायाम्म कथा) ज्ञाता धर्म कथा का यह अर्थ कहा है तो, हे

भगवन्, श्रमण भगवान्ने (जो मोक्षको प्राप्त होगये है) सप्तम अङ्ग उपासकदशा का क्या अर्थ कहा है?"

(तब सुधर्म्मा स्वामीजीने उत्तर दिया) हे जम्बू, श्रमण भगवान्जीने (जो मोक्षको प्राप्त होगये हैं) सप्तम अङ्ग उपासकदशाके दस अध्ययन कहे हैं वह इसप्रकार हैं.— १ आनन्द २ कामदेव ३ गाथापति (ऋद्धिमद् विशेष) चुलणीपिता ४ सुरादेव ५ चुलशतक ६ गाथापति कुण्डकोलिक ७ शब्दालपुत्र ८ महाशतक ९ नन्दिनीपिता १० सालिहीपिता

(जम्बूस्वामीजी बोले) "यद्यपि, हे भगवन्, श्रमण भगवान्जीने (जो मोक्षको प्राप्त कर चुके हैं) सातवें अङ्ग उपासकदशाके दश अध्ययन कहे हैं तो, हे भगवन्, (मोक्षको प्राप्त) श्रमण भगवान्जीने प्रथम अध्यायके क्या अर्थ कहे हैं?" ॥ २ ॥

एवं खलु, जम्बू, तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियगामे नामं नयरे होत्था । वण्णओ । तस्स वाणियगामस्स नयरस्स वहिया उत्तर पुरत्थिमे दिसीभाए दूइपलासए नामं चेइए । तत्थ णं वाणियगामे

१ गाथापति शब्दमूलमें है जिसका यह अर्थ होता है कि—भूमि जिनके बहुत थी और धान्यादिके विशेष "गाह" होते थे इसलिए "गाहावइ' गाथापति उसे कहते हैं । इसप्रकार भी शब्द व्याख्या है

नयरे जियसत्तू राया होत्था । वण्णओ । तत्थणं वाणियगामे आणन्दे नामं गाहावई परिवसइ, अड्ढे जाव अपरिभूए ॥ ३ ॥

(सुधर्म्मा स्वामीजी बोले) हे जम्बू, उसकाल, उससमय वाणिज्यग्राम नामवाला एक नगर था (वणाओ) उस वाणिज्यग्राम नगरके बाहर उत्तर पूर्वके मध्यकी दिशामें (in the north-easterly direction) द्युतिपलाश नामक एक उद्यान था उस वाणिज्यग्राम नगरमें जितशत्रु (जैतशत्रु) राजा राज्य करता था (राजाका वर्णन अन्य राजाओंके समान समझ लेना) और आनन्द नामक एक गृहपति भी रहता था जो अति धनवान् था अर्थात् (उसकी जातिमें) उसके समान धनी या ऐश्वर्य्ययुक्त कोई भी न था ॥ ३ ॥

[1] तस्स णं आणन्दस्स गाहावइस्स चत्तारि हिरण्णकोडीओ निहाण पउत्ताओ, चत्तारि हिरण्णकोडीओ वड्ढिपउत्ताओ, चत्तारि हिरण्णकोडीओ पवित्थर पउत्ताओ, चत्तारि वया दस गोसाहस्सिएणं वएणं होत्था ॥ ४ ॥

उस आनन्द गाथापतिकी चार करोड स्वर्ण मुद्रा भूमिमें

१ स्थिर कोष २ व्यापार ३ गृह सामग्री इसप्रकार धनके तीन भाग होने चाहिए

रक्खी हुई थी, (अर्थात् इस धनको आनन्दश्रावकने पृथ्वीमें रक्खा हुआ था) चार करोड स्वर्ण मुद्रा उसने व्यापारमें लगाई हुई थी, चार करोड स्वर्णमुद्रा उसने प्रविस्तरमें लगाई हुई थी (प्रविस्तर =धनधान्यद्विपदचतुष्पदादि) और चार यूथ, (व्रज) प्रत्येक यूथमें दशसहस्र गौ थीं, ऐसे चार वर्ग उसके पास थे ॥ ४ ॥

से णं आणन्दे गाहावइ बहूण राईसर जाव सत्थवाहाणं बहूसु कज्जेसु यं[1] कारणेसु य मन्तेसु य कुडुम्बेसु य गुज्झेसु य रहस्सेसु य निच्छएसु य ववहारेसु य आपुच्छणिज्जे य पडिपुच्छणिज्जे, सयस्स वि य णं कुडुम्बस्स मेढीपमाणं आहारे आलम्बणं चक्खू, मेढीभूए जाव सव्वकज्जवड्ढावए यावि होत्था ॥ ५ ॥

उस आनन्द गृहपतिको बहुत सारे राजा, राजकुमार वा व्यापारी लोग स्वकुटुम्बके कार्य्योंमें, कारणोंमें, निर्णयोंमें पूछते थे और गुप्त भेद, रहस्य, निश्चय व्यवहारादिमें भी उसकी मन्त्रणा ग्रहण करते थे वह (आनन्द) स्वकुटुम्बका पथदर्शक, (Pillar) बल, अवलम्बन, मेढीभूत, नेत्र अर्थात्

---

१ "य" चकारका बोधक कहाता है

मुख्याश्रय या शिरोमणि था अर्थात् सर्व कार्य्योंकी उन्नतिमें एक वही मुख्य कारण था ॥ ५ ॥

तस्स णं आणन्दस्स गाहावइस्स सिवनन्दा नाम भारिया होत्था, अहीण जाव सुरूवा। आणन्दस्स गाहावइस्स इट्ठा, आणन्देणं गाहावइणा सद्धिं अणुरत्ता अविरत्ता इट्ठा, सद् जाव पचविहे माणुस्सए कामभोए पच्चणुभवमाणी विहरइ ॥ ६ ॥

उस आनन्द गाथापतिकी शिवनन्दा नामा स्त्री थी जो सुशीला, रूपवान् तथा (जाव=यावत् सर्व पतिव्रता स्त्रियाके गुणोंसे युक्त थी) गृहपति आनन्दकी इष्ट थी और आनन्द गाथापतिके साथ अनुरक्त, अविरक्त और इष्ट शब्दरूप गंध रस स्पर्श पाच प्रकार के मनुष्यों के (गृह) सुखोंको भोगती हुई रहती थी ॥ ६ ॥

तस्स णं वाणियगामस्स वहिया उत्तर पुरत्थिमे दिसीभाए एत्थ णं कोल्लाए नाम सन्निवेसे होत्था, रिद्धत्थिमिय जाव पासादीए ४ ॥ ७ ॥

उस वाणिज्यग्राम के बाहर उत्तर पूर्व के मध्यकी दिशामे एक कोल्लाक नामक (संनिवेश[1]) ग्राम था जो लम्बा, मज़बूत,

---

1 सन्निवेश एक महत् मह्लेका नामभी है जो कि लघु ग्रामकेही समान होताहै

शोभायमान यावत् दर्शन योग्य, अच्छे स्वरूपवाला विविध रूपोंसे युक्त मनको प्रसन्न करनेवाला था ॥ ७ ॥

तत्थ ण कोल्लाए सन्निवेसे आणन्दस्स गाहाव-इस्स बहुए मित्त नाइनियगसयण सम्बन्धि परिजणे परिवसइ अड्ढे जाव अपरिभूए ॥ ८ ॥

उस कोल्लाक ग्राममें आनन्द गाथापतिके बहुत मित्र, कुटुम्बी, सामाजिक पुरुष वा अपने सज्जन सम्बन्धी मनुष्य निवास करते थे जो बहुत धनवान् यावत् अतुल्य ऋद्धि युक्त थे ॥ ८ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महा-वीरे जाव समोसरिए । परिसा निग्गया । कूणिए राया जहा तहा जियसत्तू निग्गच्छइ २ त्ता जाव पज्जुवासइ ॥ ९ ॥

उस काल, उससमय श्रमण भगवान् महावीरजी (यावत्) वहा पधारे, नगरवासी (दर्शनार्थ) गए कूणिक राजाके समान जितशत्रुने निकलकर (यावत्) यथा विधि वन्दना नमस्कार करके सेवा भक्ति की ॥ ९ ॥

तएण से आणन्दे गाहावइ इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे, "एव खलु समणे जाव विहरइ, तं महा-

पडिच्छियमेयं भन्ते. इच्छियपडिच्छियमेयं भन्ते, से जहेय तुब्भे वयह, त्तिकट्टु जहाए देवाणुप्पियाणं अन्तिए वहवे राईसरतलवरमाडम्बिय कोडुम्बिय सेट्टि सत्थवाहप्पभिइया मुण्डाभवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइया, नो खलु अह तहा सचाएमि मुण्डे जाव पव्वइत्तए । अहण्ण देवाणुप्पियाण अन्तिए पचाणुवइय सत्तसिक्खावइय दुवालसविहगिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामि '। अहासुह, देवाणुप्पिया, मा पडिवन्ध करेह ॥ १२ ॥

तब आनन्द गाथापतिने श्रमण भगवान् महावीरजीके पास धर्मको ध्यानसे सुनकर और मनमें प्रसन्न होकर ऐसे कहा । "हे भगवन्, मैं जिनशासनमें श्रद्धा रखता हू और निर्ग्रन्थियोंके (साधु) वचनोंको स्वीकार करता हू इसके उपरान्त, हे भगवन्, मैं जिन शासनसे प्रसन्नभी हुआ हू यह (निर्ग्रंथके प्रवचन कथनानुसार) ऐसेही हैं, यथार्थ है अत सत्य हैं हे भगवन्, मैं इसकी इच्छा करता हू तथा मैं इसको अगीकार और स्वीकारभी करता हू, वह यथार्थ है जो आपने कहा है यद्यपि, हे देवानुप्रिय! आपके पास बहुत राजा, राजकुमार, महाकुलीन, राज्याधिकारी, नगराधिकारी, महाजन

वा व्यापारी मनुष्य मुण्डित (मुनि) हुये हैं और उन्होंने गृहस्थको त्याग कर साधू वृत्तिको अंगीकार किया है तदपि निश्चयसे मैं साधु होनेके अर्थात् गृहस्थ को त्याग कर साधूपन स्वीकार करनेके असमर्थ हू इसलिये हे देवानुप्रिय! (भगवन्) मैं आपके सामने पाच अणुव्रत सात शिक्षा व्रत अर्थात् १२ बारह व्रतयुक्त गृहस्थ धर्मको ग्रहण करता हू" तब महावीरजीने उत्तर दिया कि—हे देवताओंको प्रिय! इस काममें देरी मत करो ॥ १२ ॥

तए ण से आणन्दे गाहावइ समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए तप्पढमयाए थूलग पाणाइवायं पच्चक्खाइ। "जावज्जीवाए दुविह तिविहेण न करेमि न कारवेमि मणसा वयसा कायसा" ॥ १३ ॥

तदानन्तर उस गृहपति आनन्दने श्रमण भगवान् महावीरजीके पास सबसे पहिले स्थूल प्राणातिपातका प्रत्याख्यान किया और कहा कि मैं जीवन पर्यन्त द्विविध वा तीन योग और मन, वचन, काया से (जीव हिंसा) न करूगा न कराऊगा ॥ १३ ॥

तयाणन्तर च ण थूलग मुसावाय पच्चक्खाइ। "जावज्जीवाए दुविह तिविहेण न करेमि न कारवेमि मणसा वयसा कायसा" ॥ १४ ॥

तदुपरान्त उसने स्थूल मृषावाद (असत्य) का प्रत्याख्यान किया और कहा कि मैं जीवन पर्यन्त द्विविध, तीन योग और मन, वचन, कायासे (मिथ्या वचनका सेवन) न करूंगा न कराऊंगा ॥ १४ ॥

तयाणन्तर च णं थूलग अदिण्णादाणं पच्चक्खाइ। "जावज्जीवाए दुविहं तिविहेणं न करेमि न कारवेमि मणसा वयसा कायसा" ॥ १५ ॥

इसके अनन्तर उसने स्थूल अदत्तादान (चोरी) का प्रत्याख्यान किया और कहा कि मैं जीवन पर्यन्त द्विविध, [illegible] योग और मन, वचन, कायासे (चोरी) न करूंगा न [illegible]ऊंगा ॥

त[illegible] सदारसन्तोसीए

तयाणन्तर च णं इच्छाविहिपरिमाण करेमाणे, हिरणसुवणविहिपरिमाणं करेड । "नन्नत्थ चउहिहि-रणकोडीहिं निहाणपउत्ताहिं, चउहि वड्डि पउत्ताहिं, चउहि पवित्थर पउत्ताहि, अवसेस सव्वं हिरणसुवण-विहि पच्चक्खामि ३" ॥ १७ ॥

तदुपरान्त उसने इच्छा (तृष्णा) की विधिका परिमाण करते हुए हिरण्यसुवर्णकी विधिका परिमाण किया। और कहा कि मैं चार करोड निधान प्रयुक्त सुवर्ण मुद्रा, चार करोड वृद्धि प्रयुक्त सुवर्ण मुद्रा और चार करोड प्रविस्तर प्रयुक्त सुवर्ण मुद्राके सिवा अवशेष सब हिरण्यसुवर्णकी विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ १७ ॥

तयाणन्तरं च ण चउप्पयविहि परिमाणं करेइ, "नन्नत्थ चउहि वएहिं दसगोसाहस्सिएणं वएणं अवसेसं सव्वं चउप्पयविहि पच्चक्खामि ३" ॥ १८ ॥

तदानन्तर उसने चतुष्पद पशुओंकी विधिका परिमाण किया, और कहा कि मैं दशसहस्र गौओ का एक वर्ग, ऐसे चार वर्गोंके सिवा अवशेष सब चतुष्पद विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हूं ॥ १८ ॥

१ जो धन वृद्धिके लिये व्याजआदिपर दिया जाता है वह 'वृद्धिप्रयुक्त' धन कहलाता है

तयाणन्तर च णं खेत्तवत्थु विहिपरिमाणं करेइ । "नन्नत्थ पश्चहि हलसएहि नियत्तणसइएणं हलेणं, अवसेसं सव्वं खेत्तवत्थुविहिं पच्चक्खामि ३" ॥१९॥

तदुपरान्त उसने क्षेत्र और गृहकी पृथ्वीकी विधिका परिमाण किया । और कहा कि मैं पांचसौ ५०० हल, प्रत्येक हलकी १०० निवर्तन पृथ्वी, के सिवाय अवशेष सब क्षेत्र और गृहकी पृथ्वी की विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ १९॥

तयाणन्तर च णं सगडविहिपरिमाणं करेइ । "नन्नत्थपञ्चहि सगडसएहि दिसायत्तिएहि, पञ्चहि सगडसएहि संवाहणिएहि, अवसेसं सव्वं सगडविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २० ॥

तदानन्तर उसने शकटकी विधिका परिमाण किया । और कहा कि मैं पांचसौ शकट (गड्डे) दिशायात्रिक, और पांचसौ शकट सांवाहनिकका आगार रखकर अवशेष सब शकटकी विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २० ॥

१ घरका काम करनेके लिये अथात् खेतोंसे तृण काठ धान्यादि लानेके लिये जो शकट (गड्डे) आनन्द श्रावकके पास थे वह सांवाहनिक शकट कहलाते थे और जो अन्यदेश देशान्तरोंको व्यापाराथ जाते थे वह दिशायात्रिक (गड्डे) कहलाते थे।

तयाणन्तरं च णं वाहणविहि परिमाण करेइ । "नन्नत्थ चउहि वाहणेहि दिसायत्तिएहिं, चउहिं वाहणेहिं संवाहणिएहि, अवसेस सव्वं वाहणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २१ ॥

इसके उपरान्त उसने वाहन (किश्ती, वेडी) की विधिका परिमाण किया और कहा कि मैं चार वडे वाहन (पोत-जहाज) दिशायात्रिक, और चार वाहन सावाहनिकका आगार रखकर अवशेष सव वाहनकी विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २१ ॥

तयाणन्तरं च णं उवभोगपरिभोगविहि पच्चक्खाएमाणे, उल्लणियाविहिपरिमाणं करेइ । "नन्नत्थ एगाए गन्धकासाईए, अवसेसं सव्व उल्लणियाविहि पच्चक्खामि ३" ॥ २२ ॥

इसके अनन्तर उपभोग वा परिभोग की विधिका प्रत्याख्यान करते हुये जललूपणवस्त्र (तौलिया—शरीरपूंछनवस्त्र) की विधिका परिमाण किया और कहा कि मैं एक गन्धकापायी (सुगन्धित और कपायसे रक्त) वस्त्रके सिवा अवशेष सव जललूपण वस्त्रो का मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २२ ॥

तयाणन्तर च ण दन्तवणविहिपरिमाण करेइ । "नन्नत्थ एगेण अल्ललट्ठीमहुएण, अवसेस दन्तवणविहिपच्चक्खामि ३" ॥ २३ ॥

तदानन्तर उसने दन्तमलापकर्षण काष्ठ की विधिका परिमाण किया और कहा कि मैं एक आर्द्र मधुर रससंयुक्त यष्टीके सिवाय सब दन्तपावन की विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २३ ॥

तयाणन्तर च ण फलविहिपरिमाण करेइ । "नन्नत्थ एगेणं खीरामलएण, अवसेस फलविहि पच्चक्खामि ३" ॥ २४ ॥

तदुपरान्त उसने फलकी विधिका परिमाण किया । और कहा कि मैं एक क्षीरके अवद्ध
(आमले) फलके
वचन और कायासे

तयाणन्तर
"नन्नत्थ सयप
अब्भङ्गणविहिं

तत्पश्चात्
परिमाण किया

निर्मित तैलके सिवा शेष अभ्यंग की विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २५ ॥

तयाणन्तरं च णं उवट्टणविहिं परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ एगेणं सुरहिणा गन्धट्टएणं, अवसेसं उव्वट्टणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २६ ॥

तदानन्तर उसने उद्वर्तन की विधि का परिमाण किया। और कहा कि मैं एक पुष्टीकारक सुगन्धयुक्त गोधूमचूर्ण (आटा) के सिवाय शेष सब उद्वर्तन की विधिका मन, वचन और कायासे त्याग करता हू ॥ २६ ॥

तयाणन्तर च णं मज्जणविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ अट्ठहि उट्टिएहि उदगस्स घडएहिं, अवसेस मज्जणविहि पच्चक्खामि ३" ॥ २७ ॥

तदुपरान्त उसने मज्जन (स्नान) की विधि का परिमाण किया। और कहा कि मैं अष्ट उष्ट्रिका जलसे युक्त एक घड़े के सिवा शेष मज्जन विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २७ ॥

तयाणन्तरं च णं वत्थविहिं परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ एगेणं खोमजुयलेण, अवसेस वत्थविहि पच्चक्खामि ३" ॥ २८ ॥

तयाणन्तर च ण दन्तवणविहिपरिमाण करेइ । "नन्नत्थ एगेण अल्ललट्ठीमहुएण, अवसेस दन्तवणविहिपच्चक्खामि ३" ॥ २३ ॥

तदानन्तर उसने दन्तमलापकर्षण काष्ठ की विधिका परिमाण किया और कहा कि मैं एक आर्द्र मधुर रसमेयुक्त यष्टीके सिवाय सब दन्तपावन की विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २३ ॥

तयाणन्तर च ण फलविहिपरिमाण करेइ । "नन्नत्थ एगेण खीरामलएणं, अवसेस फलविहि पच्चक्खामि ३" ॥ २४ ॥

तदुपरान्त उसने फलकी विधिका परिमाण किया । और कहा कि मै एक क्षीरके समान मधुर अबद्धास्थिक (आमले) फलके सिवा शेष सब फलों की विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २४ ॥

तयाणन्तर च ण अब्भङ्गणविहि परिमाण करेइ । "नन्नत्थ सयपागसहस्स पागेहि तेल्लेहि, अवसेस अब्भङ्गणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २५ ॥

तत्पश्चात् उसने अभ्यग (तैलादि) की विधिका परिमाण किया और कहा कि मैं शत या सहस्र द्रव्योंसे

निर्मित तैलके सिवा शेष अभ्यंग की विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २५ ॥

तयाणन्तरं च णं उवट्टणविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ एगेणं सुरहिणा गन्धट्टएणं, अवसेसं उव्वट्टणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २६ ॥

तदानन्तर उसने उद्वर्तन की विधि का परिमाण किया। और कहा कि मैं एक पुष्टीकारक सुगन्धयुक्त गोधूमचूर्ण (आटा) के सिवाय शेष सब उद्वर्तन की विधिका मन, वचन और कायासे त्याग करता हू ॥ २६ ॥

तयाणन्तर च णं मज्जणविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ अट्ठहि उट्टिएहि उदगस्स घडएहिं, अवसेस मज्जणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २७ ॥

तदुपरान्त उसने मज्जन (स्नान) की विधि का परिमाण किया। और कहा कि मैं अष्ट उष्ट्रिका जलसे युक्त एक घडे के सिवा शेष मज्जन विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २७ ॥

तयाणन्तरं च णं वत्थविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ एगेणं खोमजुयलेण, अवसेस वत्थविहि पच्चक्खामि ३" ॥ २८ ॥

तयाणन्तर च ण दन्तवणविहिपरिमाण करेइ ।
"नन्नत्थ एगेणं अल्ललट्ठीमहुएणं, अवसेसं दन्तवणविहिपच्चक्खामि ३" ॥ २३ ॥

तदानन्तर उसने दन्तमलापकर्षण काष्ठ की विधिका परिमाण किया और कहा कि मैं एक आर्द्र मधुर रससेयुक्त यष्टीके सिवाय सब दन्तपावन की विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २३ ॥

तयाणन्तर च ण फलविहिपरिमाण करेइ ।
"नन्नत्थ एगेण खीरामलएण, अवसेस फलविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २४ ॥

तदुपरान्त उसने फलकी विधिका परिमाण किया । और कहा कि मै एक क्षीरके समान मधुर अबद्धास्थिक (आमले) फलके सिवा शेष सब फलों की विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २४ ॥

तयाणन्तर च ण अब्भङ्गणविहि परिमाणं करेइ ।
"नन्नत्थ सयपागसहस्स पागेहि तेल्लेहिं, अवसेस अब्भङ्गणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २५ ॥

तत्पश्चात् उसने अभ्यग (तैलादि) की विधिका परिमाण किया और कहा कि मैं शत या सहस्र द्रव्योंसे

निर्मित तैलके सिवा शेष अभ्यंग की विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २५ ॥

तयाणन्तरं च ण उव्वट्टणविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ एगेणं सुरहिणा गन्धट्टएणं, अवसेसं उव्वट्टणविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ २६ ॥

तदानन्तर उसने उद्वर्तन की विधि का परिमाण किया। और कहा कि मैं एक पुष्टीकारक सुगन्धयुक्त गोधूमचूर्ण (आटा) के सिवाय शेष सब उद्वर्तन की विधिका मन, वचन और कायासे त्याग करता हू ॥ २६ ॥

तयाणन्तरं च ण मज्जणविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ अट्ठहिं उट्टिएहि उदगस्स घडएहिं, अवसेस मज्जणविहि पच्चक्खामि ३" ॥ २७ ॥

तदुपरान्त उसने मज्जन (स्नान) की विधि का परिमाण किया। और कहा कि मैं अष्ट उष्ट्रिका जलसे युक्त एक घडे के सिवा शेष मज्जन विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २७ ॥

तयाणन्तरं च णं वत्थविहि परिमाणं करेइ। "नन्नत्थ एगेणं खोमजुयलेणं, अवसेस वत्थविहि पच्चक्खामि ३" ॥ २८ ॥

तदानन्तर उसने वस्त्रकी विधिका परिमाण किया। और कहा कि मैं कार्पासिक युगल (कपासका जोडा) के सिवा शेष वस्त्रविधि का मन, वचन और कायासे त्याग करता हू ॥२८॥

तयाणन्तर च ण विलेवणविहि परिमाण करेइ। "नन्नत्थ अगरु कुकुम चन्दण मादिएहिं, अवसेसं विलेवणविहि पच्चक्खामि ३" ॥ २९ ॥

तत् पश्चात् उसने विलेपन की विधिका परिमाण किया। और कहा कि मैं अगरु केसर वा चन्दनादि गन्धद्रव्योंके अन्यत्र शेप विलेपन की विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ २९ ॥

तयाणन्तर च णं पुप्फविहि परिमाण करेइ। "नन्नत्थ एगेण सुद्धपउमेण मालइकुसुमदामेण वा, अवसेस पुप्फविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ ३० ॥

तदानन्तर उसने पुष्पविधिका परिमाण किया। और कहा कि मैं शुद्धपद्म और मालती कुसुमोंकी दामन् (फूलमाला) के अन्यत्र अवशेष पुष्पविधिका मन वचन और कायासे त्याग करता हू ॥ ३० ॥

तयाणन्तर च ण आभरणविहि परिमाण करेइ। "नन्नत्थ मट्ठकणेज्जएहिं नाममुद्दाए य, अवसेस आभरणविहि पच्चक्खामि ३' ॥ ३१ ॥

तत् पश्चात् आनन्दने भूपणविधि का परिमाण किया । और कहा कि मैं मृष्ट कर्णेजक (कर्णाभरण) और नामाकित मुद्राके अन्यत्र शेप भूपणविधिका मन, वचन और कायासे त्याग करता हू ॥ ३१ ॥

तयाणन्तर च णं धूवणविहि परिमाणं करेइ । "नन्नत्थ अगरु तुरुक्क धूव मादिएहिं, अवसेस धूवण-विहि पच्चक्खामि ३" ॥ ३२ ॥

इसके उपरान्त उसने धूपविधिका परिमाण किया । और कहा कि मैं अगरु और तुरुष्कादि (शल्लकी लक्षण धूप) धूपके अन्यत्र शेप सब धूप विधिका मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ ३२ ॥

तयाणन्तर च ण भोयणविहि परिमाण करे-माणे, पेज्जविहि परिमाण करेइ । "नन्नत्थ एगाए कट्ठपेज्जाए, अवसेसं पेज्जविहि पच्चक्खामि ३" ॥३३॥

तदानन्तर उसने भोजन विधिका परिमाण करते हुये पेयाहार विधि का परिमाण किया और कहा कि मैं एक कृष्टपेय (मुद्गादियूपो घृततलिततण्डुलपेय= Water, milk or rice-gruel) के अन्यत्र शेप पेयाहार विधि का प्रत्याख्यान मन वचन और कायासे करता हूं ॥ ३३ ॥

तयाणन्तर च ण भक्खविहि परिमाण करेइ ।

"नन्नत्थ एगेहिं घयपुरणेहिं खएड खजएहिं वा, अव-सेस भक्खविहिं पच्चक्खामि ३"॥ ३४ ॥

तदानन्तर उसने भक्तविधि का परिमाण किया। और कहा कि मैं घृतपूर (घेवर) और खएड खाधकके अन्यत्र शेष भक्तविधि का मन वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ ३४ ॥

तयाणन्तर च ण ओदणविहि परिमाण करेइ। "नन्नत्थ कलमसालि ओदणेण, अवसेसं ओदण-विहिं पच्चक्खामि ३" ॥ ३५ ॥

तदुपरान्त उसने ओदनविधि का परिमाण किया। और कहा कि मैं एक कलमशालि ओदन (पूर्व देशमें ओदन की एक प्रसिद्ध किसम) के अन्यत्र शेप ओदनविधि का मन वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ ३५ ॥

तयाणन्तर च ण सूवविहि परिमाण करेइ। "नन्नत्थ कलायसूवेण वा मुग्ग मास सूवेण वा, अव-सेस सूवविहि पच्चक्खामि ३" ॥ ३६ ॥

तदानन्तर उसने सूपविधि (दालकी विधि) का परिमाण किया और कहा कि मैं कलाय सूप (एक जाति का चणकाकार धान्य विशेष) और मुद्गमापसूप (मूग और म्मा

की दाल) के अन्यत्र शेष सूप विधि का मन वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ ३६ ॥

तयाणन्तर च ण घयविहि परिमाणं करेइ । "नन्नत्थ सारइएण गोघय मण्डेण, अवसेसं घयविहि पच्चक्खामि ३" ॥ ३७ ॥

तदुपरान्त उसने घृतविधि का परिमाण किया। और कहा कि मैं शारदिक (शरत्कालमें सग्रह किया हुआ) गोघृतसारके सिवा शेष घृतविधि का मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ ३७ ॥

तयाणन्तर च ण सागविहि परिमाणं करेइ । "नन्नत्थ वत्थुसाएण वा सुत्थियसाएण वा मण्डुकियसाएण वा, अवसेस सागविहिं पच्चक्खामि३"॥३८॥

तदानन्तर उसने शाकविधि का परिमाण किया और कहा कि मैं वास्तुशाक, सौवस्तिक शाक, और मण्डूकिका (मटरविशेष) शाक के अन्यत्र शेष शाकविधि का मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करताहू ॥ ३८ ॥

तयाणन्तर च ण माहुरयविहि परिमाण करेइ । "नन्नत्थ एगेण पालङ्गामाहुरएणं, अवसेसं माहुरयविहि पच्चक्खामि ३" ॥ ३९ ॥

तदुपरान्त उसने माधुरक विधि का परिमाण किया । और कहा कि मैं एक पालङ्कयामाधुरक (वल्लीफल) के व्यतिरेक शेप माधुरक विधि का मन वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ ३९ ॥

तयाणन्तर च ण जेमणविहि परिमाण करेइ । "नन्नत्थ सेहवदालियवेहि, अवसेस जेमणविहि पच्चक्खामि ३" ॥ ४० ॥

तदानन्तर उसने जेमनविधि (भोजन विधि) का परिमाण किया और कहा कि मैं सेधाम्लदालिका (वडे—भल्ले) के अन्यत्र शेप जेमन विधि का मन वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ ४० ॥

तयाणन्तर च ण पाणियविहि परिमाण करेइ । "नन्नत्थ एगेण अन्तलिक्खोदएण, अवसेस पाणियविहि पच्चक्खामि ३" ॥ ४१ ॥

तदुपरान्त उसने पानीयविधि का परिमाण किया ॥ और कहा कि मैं एक अन्तरिक्ष उदक (वर्षा जल) के अन्यत्र शेप पानीय विधिका मन वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ ४१ ॥

तयाणन्तर च ण मुहवासविहि परिमाण करेइ ।

"नन्नत्थ पञ्चसोगन्धिएणं तम्बोलेणं, अवसेसं मुहवासविहिं पच्चक्खामि ३" ॥ ४२ ॥

तदुपरान्त उसने मुखवास विधि का परिमाण किया और कहा कि मैं पाच सुगन्धि युक्त द्रव्यों से मिलित ताम्बूल (पान) के अन्यत्र शेष मुखवास विधि का मन, वचन और कायासे प्रत्याख्यान करता हू ॥ ४२ ॥

तयाणन्तरं च ण चउव्विहिं अणट्ठा दण्डं पच्चक्खाइ । त जहा । अवज्झाणायरियं, पमायायरियं, हिंसप्पयाण, पावकम्मोवएसे ॥ ४३ ॥

तदानन्तर उसने चार प्रकारके अनर्थदण्ड[1] का त्याग किया। यह यह है। १ द्रोहचिन्तकध्यान, (मनमें अनिष्ट विचारकरना) २ प्रमत्ताचार (प्रमाद करना) ३ शस्त्रों का दान, ४ पापकर्म का उपदेश देना ॥ ४३ ॥

इह खलु "आणन्दा" इ समणे भगवं महावीरे आणन्द समणोवासगं एवं वयासी। "एवं खलु, आणन्दा, समणोवासएण अभिगयजीवाजीवेणं जाव अणइक्कमणिज्जेण सम्मत्तस्स पञ्च अइयारा पेयाला जाणियव्वा, न समायरियव्वा । तं जहा।

१ धम, अर्थ, काम की अतिरहित जो दण्ड है उसको अनर्थ दण्ड कहते है।

सङ्का, कङ्खा, विइगिच्छा, परपासण्डपससा, परपास-
ण्डसथवो ॥ ४४ ॥

तव श्रमण भगवान् महावीर जी आनन्द श्रमणोपासक को ऐसे बोले । हे आनन्द ! जीव अजीव के भेद के ज्ञाता यावत् अनतिक्रमणीय श्रद्धायुक्त श्रमणोपासक को सम्यक्त्व के पाच प्रधान अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण न करना चाहिये । वह अतिचार यह हैं । १ सशय करना २ काक्षा अर्थात् अन्यान्य दर्शन ग्रहण करना ३ विचिकित्सा अर्थात् फल और सत्पुरुषों के कथनो में सत्यासत्य की शका करना ४ परपाषण्डप्रशसा अर्थात् अन्य पाषण्डी पुरुषों की ऐसी प्रशसा करना जिस से श्रोताओं को उनकी रुचि उत्पन्न हो ५ परपाषण्डसस्तव अर्थात् धर्म से पतित वा नास्तिकादि पाषडी पुरुषों के साथ अति मित्रता या प्रेम उत्पन्न करना ॥ ४४ ॥

तयाणन्तर च ण थूलगस्स पाणाइवाय वेरमणस्स समणोवासएण पञ्च अइयारा पेयाला जाणियव्वा, न समायरियव्वा । त जहा । वन्धे, वहे छविच्छेए, अइभारे, भत्तपाणवोच्छेए ॥ ४५ ॥

तदानन्तर श्रमणोपासक को स्थूल प्राणातिपात के पाच अतिचार जानने चाहिये परन्तु उनका समाचरण नहीं करना

चाहिये। वह यह हैं। १ बन्धन अर्थात् कठिन बंधनों से बाधना २ यष्ट्यादि से ताडन करना ३ शरीरावयवच्छेद अर्थात् अगोपाङ्ग छेदन करना ४ पशु आदि की शक्ति न देखकर अति भार आरोपण करना ५ अशनपानीयाप्रदान अर्थात् अन्न पानी न देना ॥ ४५ ॥

तयाणन्तर च ण थूलगस्स मुसावाय वेरमणस्स पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा। तं जहा। सहसाभक्खाणे, रहसाभक्खाणे, सदारमन्तभेए, मोसोवएसे, कूडलेहकरणे ॥ ४६ ॥

तदुपरान्त स्थूल मृषावादके पाच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण नहीं करना चाहिये। वह इस प्रकार हैं। १ सहसाभ्याख्यान अर्थात् विनाविचारे दोषआरोपण करना २ रहस्य अर्थात् गुप्तवार्ता प्रकाश करना ३ स्वभार्या का मन्त्र अर्थात् भेद प्रकाश करना ४ मिथ्याउपदेश देना ५ कूटलेख अर्थात् खोटा लेख लिखना ॥ ४६ ॥

तयाणन्तरं च ण थूलगस्स अदिण्णादाण वेरमणस्स पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा। तं जहा। तेणाहडे, तक्करप्पओगे, विरुद्ध रज्जाइक्कमे, कूडतुल्लकूडमाणे, तप्पडिरूवगववहारे ॥ ४७ ॥

सङ्का, कङ्खा, विइगिच्छा, परपासण्डपसंसा, परपासण्डसंथवो ॥ ४४ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीर जी आनन्द श्रमणोपासक को ऐसे बोले । हे आनन्द! जीव अजीव के भेद के ज्ञाता यावत् अनतिक्रमणीय श्रद्धायुक्त श्रमणोपासक को सम्यक्त्व के पाच प्रधान अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण न करना चाहिये । यह अतिचार यह हैं । १ सशय करना २ कान्ता अर्थात् अन्यान्य दर्शन ग्रहण करना ३ विचिकित्सा अर्थात् फल और सत्पुरुषों के कथनों में सत्यासत्य की शका करना ४ परपाषण्डप्रशसा अर्थात् अन्य पाषडी पुरुषों की ऐसी प्रशसा करना जिस से श्रोताओं को उनकी रुचि उत्पन्न हो ५ परपाषण्डसस्तव अर्थात् धर्म से पतित वा नास्तिकादि पाषडी पुरुषों के साथ अति मित्रता वा प्रेम उत्पन्न करना ॥ ४४ ॥

तयाणन्तर च ण थूलगस्स पाणाइवाय वेरमणस्स समणोवासएण पञ्च अइयारा पेयाला जाणियव्वा, न समायरियव्वा । त जहा । वन्धे, वहे, छविच्छेए, अइभारे, भत्तपाणवोच्छेए ॥ ४५ ॥

तदानन्तर श्रमणोपासक को स्थूल प्राणातिपात के पाच अतिचार जानने चाहिये परन्तु उनका समाचरण नहीं करना

चाहिये। वह यह हैं। १ बन्धन अर्थात् कठिन बधनों से बाधना २ यष्ट्यादि से ताडन करना ३ शरीरावयवच्छेद अर्थात् अगोपाङ्ग छेदन करना ४ पशु आदि की शक्ति न देखकर अति भार आरोपण करना ५ अशनपानीयाप्रदान अर्थात् अन्न पानी न देना ॥ ४५ ॥

तयाणन्तरं च ण थूलगस्स मुसावाय वेरमणस्स पञ्च अइयारा जाणियवा, न समायरियवा। तं जहा। सहसाभक्खाणे, रहसाभक्खाणे, सदारसन्तभेए, मोसोवएसे, कूडलेहकरणे ॥ ४६ ॥

तदुपरान्त स्थूल मृषावादके पाच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण नहीं करना चाहिये। वह इस प्रकार हैं। १ सहसाभ्याख्यान अर्थात् विनाविचारे दोषआरोपण करना २ रहस्य अर्थात् गुप्तवार्ता प्रकाश करना ३ स्वभार्या का मन्त्र अर्थात् भेद प्रकाश करना ४ मिथ्याउपदेश देना ५ कूटलेख अर्थात् खोटा लेख लिखना ॥ ४६ ॥

तयाणन्तरं च णं थूलगस्स अदिणादाण वेरमणस्स पञ्च अइयारा जाणियवा, न समायरियवा। तं जहा। तेणाहडे, तक्करप्पओगे, विरुद्ध रज्जाइक्कमे, कूडतुल्लकूडमाणे, तप्पडिरूवगववहारे ॥ ४७ ॥

तदानन्तर स्थूल अदत्तादान (चोरी) के पाच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण नहीं करना चाहिये। वह इस प्रकार हैं। १ स्तेनाहृत अर्थात् चौरकी चुराई हुई वस्तु लेना, २ तस्करप्रयोग अर्थात् चोर की रक्षा या सहायता करना ३ विरुद्धराज्यातिक्रम अर्थात् राज्यके नियमों के विरुद्ध कर्म करना ४ कूटतुलाकूटमान अर्थात् खोटा तोलना और खोटा मापना (अधिक लेना न्यून देना) ५ प्रतिरूपक व्यवहार अर्थात् शुद्ध में अशुद्ध वस्तु एकत्र करके विक्रय करना ॥ ४७ ॥

तयाणन्तर च ण सदारसन्तोसीए पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा। त जहा। इत्तरियपरिग्गहियागमणे, अपरिग्गहियागमणे, अणङ्गकीडा, परविवाहकरणे, कामभोगा तिव्वाभिलासे ॥ ४८ ॥

तदानन्तर स्वदारसन्तुष्टि के पाच अतिचार जानने तो चाहियें परन्तु उनका समाचरण न करना चाहिये। वह यह हैं। १ लघु व्यवस्था युक्त स्व स्त्री के साथ सभोग करना २ वाग्दत्ता स्त्री के साथ भोग भोगना ३ अनगक्रीडा अर्थात् काम के वश होकर कुचेष्टा द्वारा वीर्यपात करना ४ पर

१ यह अर्थ जैन सिद्धांतानुसार लिखता हू किन्तु 'पर विवाह करणे' का अर्थ इस प्रकार होना भी सम्भव है यथा— पर पुरुषों के विवाह का प्रबंध करना' या 'पर आदि की स्त्री के साथ विवाह करना।

पुरुषों की माग का अपने साथ विवाह करना ५ काम भोग की तीव्र अभिलाषा करना तथा ऋतुगामी न होकर विषयों में ही लपट रहना ॥ ४८ ॥

तयाणन्तरं च ण इच्छा परिमाणस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा । तं जहा । खेत्तवत्थुपमाणाइक्कमे, हिरणसुवणपमाणाइक्कमे, दुपयचउप्पयपमाणाइक्कमे, धणधन्नपमाणाइक्कमे, कुवियपमाणाइक्कमे ॥ ४९ ॥

तदुपरान्त श्रमणोपासक को इच्छा परिमाणके पाच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण नहीं करना चाहिये । वह निम्नलिखित है । १ क्षेत्र वस्तु के प्रमाण को अतिक्रम करना २ हिरण्य सुवर्ण के प्रमाण को अतिक्रम करना ३ द्विपद और चतुष्पद पशुओं के प्रमाण को अतिक्रम करना ४ धनधान्य के प्रमाण को अतिक्रम करना ५ कुप्य पदार्थों के प्रमाण को अतिक्रम करना अर्थात् गृहसामग्री के प्रमाण को उल्लघन करना ॥ ४९ ॥

तयाणन्तरं च ण दिसिव्वयस्स पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा । तं जहा । उड्ढदिसिपमाणाइक्कमे, अहोदिसिपमाणाइक्कमे, तिरियदिसिपमाणाइक्कमे, खेत्त वुड्ढी, सइअन्तरद्धा ॥ ५० ॥

तदानन्तर दिग्व्रत के पाच अतिचार जानने योग्य हैं परन्तु ग्रहण करने योग्य नहीं हैं। वह इस प्रकार हैं। १ ऊर्ध्व अर्थात् ऊची दिशा के प्रमाण का अतिक्रम करना २ अधो (नीची) दिशा के प्रमाण का अतिक्रम करना ३ तिर्यग् अर्थात् मध्य दिशा के प्रमाण का अतिक्रम करना ४ क्षेत्र की वृद्धि करना ५ स्मृत्यन्तर्धा अर्थात् शका होने पर भी प्रमाण से अधिक गमन करना ॥ ५० ॥

तयाणन्तर च ण उवभोगपरिभोगे दुविहे पण्णत्ते। त जहा। भोयणओ य कम्मओ य। तत्थ ण भोयणओ समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा। त जहा। सचित्ताहारे, सचित्तपडिबद्धाहारे, अप्पउलिओसहिभक्खणया, दुप्पउलिओसहि भक्खणया, तुच्छोसहिभक्खणया। कम्मओ ण समणोवासएण पण्णरस कम्मादाणाइ जाणियव्वाइ, न समायरियव्वाइ। त जहा। इङ्गालकम्मे, वणकम्मे, साडीकम्मे, भाडीकम्मे, फोडीकम्मे, दन्तवाणिज्जे, लक्खावाणिज्जे, रसवाणिज्जे, विसवाणिज्जे, केसवाणिज्जे, जन्तपीलणकम्मे, निल्लञ्छणकम्मे, दव-

ग्गिदावणया, सरदहतलावसोसणया, असईजणपोसणया ॥ ५१ ॥

तदुपरान्त उपभोग परिभोग द्वि प्रकार के कहे हैं। वह इस प्रकार हैं। १ भोजन सम्बन्धि २ कर्म सम्बन्धि। इस कारण श्रमणोपासक को भोजन के पाच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका आचरण नहीं करना चाहिये। वह यह है। १ सचित्त वस्तु का आहार करना २ सचित्त प्रतिबद्ध का आहार करना ३ अप्रज्वलित अर्थात् अपक्व औषधि का भक्षण करना ४ दुष्प्रज्वलित अर्थात् दु पक्व औषधि का आहार करना ५ तुच्छ औषधि का आहार करना।

श्रमणोपासक को कर्म के पञ्चदश १५ कर्मादान जानने योग्य हैं परन्तु ग्रहण करने योग्य नहीं हैं यथा—

१ अङ्गार कर्म (कोयलों का व्यापार) २ वनकर्म (वन कटवाना) ३ शकट कर्म (गाडी विक्रय) ४ भाटक कर्म (पशुओं को भाडे पर देना) ५ स्फोट कर्म (कुद्दाल हलादि से भूमि को दारण करना) ६ दन्तवाणिज्य अर्थात् हस्ती आदि के दांतों का व्यापार ७ लाक्षावाणिज्य अर्थात् लाख तथा मजीठा का व्यापार ८ रस वाणिज्य अर्थात् घृत, तेल, गुड मदिरादि का व्यापार ९ विप वाणिज्य १० केश वाणिज्य ११ यन्त्रपीडन कर्म (कोल्हू ईख पीडनादि कर्म) १२ नि-

लॉञ्छन कर्म अर्थात् पशुओं को नपुसक करना या अवय-
वों का छेदन भेदन करना १३ दवाग्नि दान (वनादि जला-
ना) १४ सरोहृदतडागपरिशोषणता अर्थात् जलाशयों के
जल को शोषित करना १५ असतीजनपोषणता कर्म अर्थात्
हिंसक जीवों का पालन पोषण करना ॥ ५१ ॥

तयाणन्तर च ण अणट्ठा दण्डवेरमणस्स समणो-
वासएण पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरिय-
व्वा । त जहा । कन्दप्पे, कुक्कुइए, मोहरिए, सञ्जुत्ता-
हिगरणे, उवभोगपरिभोगाइरित्ते ॥ ५२ ॥

तदानन्तर श्रमणोपासक को अनर्थदण्ड के पाच अतिचार
जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण नहीं करना चाहिये।
यथा—१ कन्दर्प अर्थात् कामजन्य वार्त्ताओं का करना
२ कौत्कुच्य अर्थात् मुख और नयनादि से उपहास्य करना
३ मौखर्य अर्थात् मर्मयुक्त वचन बोलना ४ प्रमाण से अधिक
उपकरण या शस्त्रादि का सचय करना ५ उपभोग और परि-
भोग का प्रमाण से अधिक सग्रह करना ॥ ५२ ॥

तयाणन्तर च ण सामाइयस्स समणोवासएण
पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा । त
जहा । मणदुप्पडिहाणे, वयदुप्पडिहाणे, कायदुप्प-

डिहाणे, सामाइयस्स सइअकरणया, सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया ॥ ५३ ॥

तदुपरान्त श्रमणोपासक को सामायिक के पाच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका आचरण नहीं करना चाहिये। वह निम्नलिखित हैं। १ मन का दुष्ट प्रणिधान करना अर्थात् मन से खोटाविचार करना २ वचन का दुष्ट प्रणिधान करना ३ काया का दुष्ट प्रणिधान करना ४ सामायिक की स्मृति न करना ५ अल्पकालीन सामायिक करना अर्थात् सामायिक के काल को पूरा न करना ॥ ५३ ॥

तयाणन्तर च ण देसावगासियस्स समणोवासएण पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा। तं जहा। आणवणप्पओगे, पेसवणप्पओगे, सद्दाणुवाए, रूवाणुवाए, वहियापोग्गल पक्खेवे ॥ ५४ ॥

तदुपरान्त श्रमणोपासक को देशावकाशिक के पाच अतिचार जानने चाहिये परन्तु उनका समाचरण नहीं करना चाहिये। यथा–१ आज्ञापन प्रयोग अर्थात् बाहिर की वस्तु आज्ञा करके मगवाना २ प्रेष्यपन प्रयोग अर्थात् प्रमाण की

१ 'इस समय मुझ सामायिक करनी उचित थी अथवा मैं ने की है या नहीं'' इस प्रकार की स्मृति न करना यह चतुर्थ अतिचार है २ षष्ठम व्रत म पूर्वादि दिशाओं के कृत प्रमाणों से नित्यम् प्रति स्वल्प करते रहना उसी का नाम देशावकाशिक है।

हुई भूमिका से बाहिर वस्तु भेजना ३ शब्दानुवाद अर्थात् शब्द करके अपने आपको प्रगट करना ४ रूपानुवाद अर्थात् रूप करके अपने आपको प्रसिद्ध करना ५ लेष्ठादि पुद्गल प्रक्षेप करके अपने आपको प्रगट करना ॥ ५४ ॥

तयाणन्तर च ण पोसहोववासस्स समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियवा, न समायरियवा । त जहा । अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहियसिज्जासंथारे, अप्पमज्जियदुप्पमज्जियसिज्जासथारे, अप्पडिलेहिय दुप्पडिलेहिय उच्चारपासवण भूमी, अप्पमज्जियदुप्पमज्जिय उच्चारपासवण भूमी, पोसहोववासस्स सम्म अणणुपालणया ॥ ५५ ॥

तदानन्तर पौषधोपवासके श्रमणोपासक को पाच अतिचार जानने चाहियें परन्तु उनका समाचरण नहीं करना चाहिये । वह निम्नलिखित है । १ शय्या वा सस्तारक प्रतिलेखन न करना यदि करना तो दुष्ट प्रकार से २ शय्या वा सस्तारक प्रमार्जित नहीं करना यदि करना तो दुष्ट प्रकार से ३ पुरीष या प्रस्रवण स्थान प्रतिलेखन न करना यदि करना तो दुष्ट प्रकार से ४ उच्चार वा प्रस्रवण स्थान प्रमार्जित न

१ पौषध–उप–वास–धर्मके समीपवसना ।

करना यदि करना तो दुष्ट प्रकार से ५ पोषधोपवास सम्यक् प्रकार से न पालन करना ॥ ५५ ॥

तयाणन्तरं च णं अहासंविभागस्स समणोवासएण पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा । तं जहा । सचित्त निक्खेवणया, सचित्तपेहणया, कालाइक्कमे, परोवदेसे, मच्छरिया ॥ ५६ ॥

तदानन्तर श्रमणोपासक को यथासंविभागके पांच अतिचार जानने योग्य हैं परन्तु ग्रहण करने योग्य नहीं है यथा— १ सचित्त निक्षेपण अर्थात् अदान बुद्धि से निर्दोष वस्तु को सचित्त वस्तु पर रख देना २ सचित्त पिधानता अर्थात् निर्दोष वस्तु को सचित्त पदार्थ (फलादि) से आच्छादन करना ३ कालातिक्रम अर्थात् उचित समय को न देनें की बुद्धि से अतिक्रम करना ४ परव्यपदेश अर्थात् पर को आहारादि देने के लिये उपदेश देना और स्वय लाभ से वंचित रहना ५ कृपणता से देना ॥ ५६ ॥

तयाणन्तरं च णं अपच्छिम मारणन्तिय संलेहणा झूसणाराहणाए पञ्च अइयारा जाणियव्वा, न समा-

---

१ जैसे दूधपर पाणी १ जैसे पाणीपर दूध २ एकवस्तु की स्थिति पूरी होजानेपर साध से विज्ञप्ति करनी ३ अपनी वस्तु को दूसरे की कहकर टालना ४ दूसरों की ईर्षा से दानदेना ।

यरियव्वा । त जहा । इह लोगाससप्पओगे, परलोगाससप्पओगे, जीविया ससप्पओगे, मरणाससप्पओगे, काम भोगाससप्पओगे ॥ ५७ ॥

तदानन्तर अपश्चिम मारणान्तिक संलेखना जोषणाराधना के पाच अतिचार जानने योग्य तो हैं परन्तु समाचरण अयोग्य हैं यथा—१ इहलोकाशसा प्रयोग अर्थात् इहलोक की आशा करना २ परलोकाशसा प्रयोग अर्थात् देवलोक आदि की आशा करना ३ जीविताशसा प्रयोग अर्थात् अधिक जीवन की आशा करना ४ मरणाशसाप्रयोग अर्थात् शीघ्र मृत्यु की आशा करना ५ कामभोगाशसा प्रयोग अर्थात् (मृत्यु के पश्चात्) कामभोग की आशा करना ॥ ५७ ॥

तएण से आणंन्दे गाहावई समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए पञ्चाणुवइय सत्तसिक्खावइयं दुवालसविह सावयधम्म पडिवज्जइ, २ त्ता समण भगव महावीर वन्दइ नमसइ, २ त्ता एव वयासी ।

---

१ वगन्त्यो वा प्रा० व्या अ० ८-पा० १ सू० ३० अनुस्वारस्य वर्ग परे प्रत्यासत्तेस्तस्यैव वर्गस्यान्त्यो वा भवति ॥ पङ्को पको । सङ्खो सखो । अङ्गण अगण । लङ्घण लघण । कञ्चुओ कचुओ । लञ्छण लछण । अञ्जिय अजिय । सञ्झा सझा । कण्टओ कटओ । उक्कण्ठा उक्कठा । कण्ड कड । सण्ढो सढो । अन्तरं अतरं । पन्थो पथो । चन्दो चदो । बन्धवो बधवो । कम्पइ कपइ । वम्फइ वफइ । कलम्बो कलबो । आरम्भो आरंभो । वग इति किम् । ससयो । सहरइ । नित्यमिच्छन्त्यन्ये ॥

"[1]नो खलु मे, भन्ते, कप्पइ अज्जप्पभिइ अन्नउत्थिए वा अन्नउत्थिय देवयाणि वा अन्नउत्थियपरिग्गहियाणि वा वन्दित्तए वा नमंसित्तए वा, पुव्वि अणालत्तेणं आलवित्तए वा संलवित्तए वा, तेसिं असणं वा पाणं वा खाइम वा साइमं वा दाऊ वा अणुप्पदाऊं वा, नन्नत्थ रायाभिओगेणं गणाभिओगेणं बलाभिओगेणं देवयाभिओगेणं गुरुनिग्गहेणं वित्तिकन्तारेणं। कप्पइ मे समणे निग्गन्थे फासुएणं एसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थकम्बलपडिग्गहपायपुञ्छणेणं पीढफलगसिज्जासंथारएणं ओसहभेसज्जेण य पडिलाभेमाणस्स विहरित्तए"। त्तिकट्टु इम एयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ, २ त्ता पसिणाइं पुच्छइ, २ त्ता अट्ठाइं आदियइ, २ त्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो वन्दइ,

---

१ नो खलु मे भंतेकप्पइ अज्जप्पभिइ अन्नउत्थिए वा अन्नउत्थिय देवयाणि वा अनउत्थियपरिग्गहियाणि वा चेइयाइ वंदित्तए वा नमंसित्तए वा इत्यादि प्राचीनप्रतिषु पाठ दृश्यते। किन्तु अधुनाप्रतिषु "अरिहंत चेइयाइ" इत्यपि पाठोऽस्ति सो यह पाठ प्रक्षिप्त सा प्रतीत होता है। अपितु जो मैंने मूल पाठ दिया है वह एशीयाटिक सोसायटी ओफ बंगाल (कलकत्ता) की मुद्रितप्रतिके अनुसार है—लेखक

२ त्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तियाओ दूइपलासाओ चेइयाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता जेणेव वाणियगामे नयरे जेणेव सए गिहे, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता सिवनन्द भारियं एव वयासी। "एवं खलु, देवाणुप्पिए, मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए धम्मे निसन्ते, से वि य धम्मे मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए, त गच्छ णं तुमं, देवाणुप्पिए, समण भगव महावीरं वन्दाहि जाव पज्जुवासाहि, समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए पञ्चाणुवइय सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्म पडिवज्जाहि' ॥ ५८ ॥

तब गृहपति आनन्द श्रमण भगवान् महावीरजीके पास पांच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत अर्थात् द्वादशविधक श्रावक धर्मको अगीकार करके और श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दन नमस्कार करके ऐसे बोला। हे भगवन्! अद्यप्रभृतिके (आजके पीछे) पश्चात् राजाभियोग, गणाभियोग, (बरादरी) बलाभियोग, देवताभियोग, गुरुनिग्रह और निर्वाहके भयके अन्यत्र अन्य कुतीर्थिक या अन्ययूथिक देवता य भगवान्का ज्ञान (Reflection) ग्रहन करनेवाले यूथिकके

मुझे वन्दना नमस्कार करना, प्रथम बिना बुलाये आलाप या सलाप करना, तथा उनको अशन, पान, खादिमन् वा स्वादिष्ट पदार्थोंका दान अथवा अनुप्रदान नहीं कल्पता है, परन्तु श्रमण वा निर्ग्रन्थियोको शुद्ध और एषणीय अशन, पान, खादिमन्, स्वादिमन्, वस्त्र, कम्बल, पात्र, प्रतिग्रह, प्रोञ्छन, (रजोहरण) पट्टादि, फलक, शय्या, संस्तारक, औषध और पथ्य देना मुझे कल्पता है। इस बातकी रीत्यानुसार प्रतिज्ञा करके प्रश्न पूछे और आदरसे उत्तर ग्रहण करके श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके भगवान् महावीरजीके पाससे द्युतिपलाश उद्यानसे निकलकर जहा वाणिज्यग्राम नगर था और जहा स्वगृह था वहा पहुचकर शिवनन्दा भार्याको ऐसे बोला । हे देवानुप्रिये! मैने श्रमण भगवान् महावीरजीसे धर्मोपदेश श्रवण किया है ।' वह धर्म मेरी इच्छानुसार, प्रतीष्ट वा मनोहर है, इस कारण, हे देवानुप्रिये! तू श्रमण भगवान् महावीरजीके पास जा और वन्दना नमस्कार करके सेवा भक्ति कर अत श्रमण भगवान् महावीरजीके पास पांच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत अर्थात् द्वादश प्रकारके गृहस्थ धर्मको अगीकार कर ॥ ४८ ॥

तएणं सा सिवनन्दा भारिया आणन्देण समणो वासएणं एवं वुत्ता समाणा हट्ठ तुट्ठा कोडुम्बिय

पुरिसे सद्दावेइ, २ त्ता एव वयासी । "खिप्पामेव लहुकरण" जाव पज्जुवासइ ॥ ५९ ॥

तब उस शिवनन्दा भार्याने श्रमणोपासक आनन्दसे ऐसा कहे जानेपर प्रसन्न होकर कौटुम्बिक पुरुषोंको बुलाकर ऐसे कहा । शीघ्रही शकट लाओ और समय न खोयो यावत् वह गाडीपर चढकर महावीरजीके पास गई और सेवा भक्ति की ॥ ५९ ॥

तएणं समणे भगवं महावीरे सिवनन्दाए तीसे य महइ जाव धम्म कहेइ ॥ ६० ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजीने शिवनन्दा और (उसकी) उपस्थित सखियों को (यावत्) धर्मोपदेश दिया ॥६०॥

तए ण सा सिवनन्दा समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए धम्म सोच्चा निसम्म हट्ट जाव गिहिधम्म पडिवज्जइ, २ त्ता तमेव धम्मियं जाणप्पवरं दुरुहइ, २ त्ता जामेव दिसं पाउब्भूया, तामेव दिसं पडिगया ॥ ६१ ॥

तब शिवनन्दाने धर्म सुनकर निश्चिन्त और प्रसन्न होकर श्रमण भगवान् महावीरजीके पास गृहस्थधर्मको अगीकार

किया और धार्म्मिक या श्रेष्ठ रथमें चढकर जिस दिशासे प्रकट हुई थी उसी दिशाको चली गई ॥ ६१ ॥

"भन्ते" त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वन्दइ, नमंसइ, २ त्ता एवं वयासी । "पहू णं, भन्ते, आणन्दे समणोवासए देवाणुप्पियाणं अन्तिए मुण्डे जाव पवइत्तए?"

'नो तिणट्ठे समट्ठे, गोयमा । आणन्दे णं समणोवासए बहूइं वासाइं समणोवासग परियागं पाउणिहिइ, २ त्ता जाव सोहम्मे कप्पे अरुणे विमाणे देवत्ताए उववज्जिहिइ । तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पणत्ता । तत्थणं आणन्दस्स वि समणोवासगस्स चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पणत्ता" ॥ ६२ ॥

भगवान् गौतमजी श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके ऐसे बोले । हे भगवन्! क्या श्रमणोपासक आनन्द देवानुप्रियके पास मुण्डित अर्थात् प्रव्रजित (जैन का शिष्य) होगा? (भगवान् महावीरजीने उत्तर दिया) हे गौतम! वह मुण्डित होनेके समर्थ नहीं है । आनन्द श्रमणोपासक बहुत वर्षतक श्रमणोपासकके धर्मको पालकर (या-

वत्) सौधर्म कल्पमें अरण विमानमें देवता उत्पन्न होगा। वहा एक वर्गके देवताओंकी चार पल्योपमकी स्थिति कही है वहापर आनन्द श्रमणोपासक की भी चार पल्योपमकी स्थिति है॥ ६२॥

तएण समणे भगव महावीरे अन्नया कयाइ वहिया जाव विहरइ ॥ ६३ ॥

तदानन्तर श्रमण भगवान् महावीरजी अन्यदा समय वाहर विहार कर गये ॥ ६३ ॥

तएण से आणन्दे समणोवासए जाए अभिगय जीवाजीवे जाव पडिलाभेमाणे विहरइ ॥ ६४ ॥

तव जीवाजीवके भेदका ज्ञाता श्रमणोपासक आनन्द (यावत्) अनुप्रदान करता हुआ रहने लगा॥ ६४॥

तएण सा सिवनन्दा भारिया समणोवासिया जाया जाव पडिलाभेमाणी विहरइ ॥ ६५ ॥

तव श्रमणोपासिका शिवनन्दा भार्या भी यावत् निर्ग्रन्थियोंकी सेवा करती हुई रहने लगी ॥ ३५॥

तएणं तस्स आणन्दस्स समणोवासगस्स उच्चावएहिं सीलव्वय गुणवेरमण पच्चक्खाण पोसहोववासेहिं अप्पाण भावेमाणस्स चोद्दस सवच्छराइं

वइक्कन्ताइ । पणरसमस्स संवच्छरस्स अन्तरा वट्ट-
माणस्स अन्नया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकाल समयसि
धम्मजागरिय जागरमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए
चिन्तिए मणोगए सकप्पे समुप्पज्जित्था । "एवं खलु
अह वाणियगामे नयरे वहूण राईसर जाव सयस्स
वि य णं कुडुम्वस्स जाव आधारे । त एएण वक्खे-
वेण अह नो सचाएमि समणस्स भगवओ महावी-
रस्स अन्तिय धम्मपणत्ति उवसम्पज्जित्ताणं विहरि-
त्तए । त सेयं खलु ममकल्ल जाव जलन्ते विउल
असणं ४ जहा पूरणो जाव जेट्ठपुत्त कुडुम्वे ठवेत्ता,
तं मित्त जाव जेट्ठपुत्त च आपुच्छित्ता, कोल्लाए सन्नि-
वेसे नायकुलंसि पोसहसाल पडिलेहित्ता, समणस्स
भगवओ अन्तिय धम्मपणत्ति उवसम्पज्जित्ताण वि-
हरित्तए" । एव सम्पेहेइ, २ त्ता कल्ल विउल तहेव
जिमियभुत्तुत्तरागए त मित्त जाव विउलेणं पुप्फ ५
सक्कारेइ सम्माणेइ, २ त्ता तस्सेव मित्त जाव पुरओ
जेट्ठपुत्त सद्दावेइ, २ त्ता एवं वयासी । "एव खलु,
पुत्ता, अह वाणियगामे वहूण राईसर जहा चिन्तियं,

जाव विहरित्तए । त सेय खलु मम इदाणिं तुमं सयस्स कुडुम्बस्स आलम्बण ४ ठवेत्ता जाव विह-रित्तए"॥ ६६ ॥

तब उस श्रमणोपासक आनन्दको उच्चावच (बडे और छोटे) शीलव्रतगुण वेरमणके प्रत्याख्यान वा पोपधोपवासकी भावना करते हुये चतुर्दश वर्ष व्यतीत होगये । पद्रहवें वर्ष के बीच धर्मकी जागर्या (जागरण) करते हुये अध्यास्थित चिन्तित मनोगत सकल्प मनमें उत्पन्न हुआ । " निश्चय करके मैं बहुत राजा राजकुमार यावत् स्व कुडुम्बका आधार हू अत इस व्याक्षेप (रुकावट) के कारण मैं श्रमण भगवान महावीरजीके पास ग्रहण किये हुये धर्मको पालनेके समर्थ नहीं हू । इसलिये श्रेष्ठ होगा यदि मैं कल(यावत्) सूर्योदयके पश्चात् अन्नपानादि द्वारा 'पूरण' तपस्वीके समान मित्रोंको प्रसन्न करके और ज्येष्ठ पुत्रको कुडुम्बका आधार स्थापित करके, मित्र यावत् ज्येष्ठ पुत्रको पूछकर, कोल्लाक सन्निवेश में स्वजनोंकी पोपधशालाको प्रतिलेखित करके, श्रमण भगवान्के पास ग्रहण किये हुये धर्मका पालन करू । ऐसा विचार कर द्वितीय दिवस अन्नादिसे उसीप्रकार मित्रोंको सन्तुष्ट करके, पुष्पादिसे उनका सत्कार वा सन्मान किया और एकत्रित मित्रोंके सामने ज्येष्ठ पुत्रको बुलाकर ऐसे बोला

हे पुत्र! निश्चय करके मैं बहुतसे राजा, राजकुमारादिका आधार हूं इत्यादि जिसप्रकार उसने सोचा था उसीप्रकार कहा इसलिये श्रेष्ठ हो यदि मैं अब अपने कुटुम्बका तुमको आधार स्थापन करके (यावत्) पोषधशालामें रहूं ॥ ६६ ॥

तए णं जेट्ठपुत्ते आणन्दस्स समणोवासगस्स "तह" त्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेइ ॥ ६७ ॥

तब ज्येष्ठ पुत्रने "ऐसा ही हो" ऐसा उच्चारण करके आनन्द श्रमणोपासककी इस बातको विनयसे श्रवण किया ॥६७॥

तए णं से आणन्दे समणोवासए तस्सेव मित्त जाव पुरओ जेट्ठपुत्तं कुडुम्बे ठवेइ, २ त्ता एव वयासी। "मा ण, देवाणुप्पिया, तुब्भे अज्जप्पभिइ केइ मम बहूसु कज्जेसु जाव आपुच्छउ वा, पडिपुच्छउ वा, ममं अट्ठाए असण वा ४ उवक्खडेउ उवकरेउ वा ॥ ६८ ॥

तब वह आनन्द श्रमणोपासक स्वमित्रादिके सामने ज्येष्ठ पुत्रको कुटुम्बमें मुख्याश्रय नियुक्त करके ऐसे बोला। हे देवानुप्रियो! अद्यप्रभृतिके पीछे आपने कार्य कारण अथवा निश्चय व्यवहारादिमें कदापि मेरी सम्मति न लेना, और मेरे लिये अन्नपानादिभी न निर्माण करना ॥ ६८ ॥

तए ण से आणन्दे समणोवासए जेट्ठपुत्त मित्तनाइ आपुच्छइ, २ त्ता सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता वाणियगाम नयर मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, २ त्ता जेणेव कोल्लाए सन्निवेसे, जेणेव नायकुले, जेणेव पोसहसाला, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता पोसहसाल पमज्जइ, २ त्ता उच्चार पासवण भूमिं पडिलेहेइ, २ त्ता दब्भसथारय सथरइ, दब्भसथारय दुरुहइ, २ त्ता पोसहसालाए पोसहिए दब्भसथारोवगए समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिय धम्मपण्णत्ति उवसम्पज्जित्ताण विहरइ ॥ ६९ ॥

तब वह श्रमणोपासक आनन्द ज्येष्ठपुत्र, मित्र, ज्ञाति पुरुषसे पूछकर स्वगृहसे निकला और वाणिजग्राम नगर के मध्यसे जहा कोल्लाक ग्राम था और जहा कुलपुरुष और पोषधशाला थी, वहा जाकर पोषधशाला प्रमार्जित करके, तथा उच्चार प्रश्रवणकी भूमिको प्रतिलेखित करके उसने दर्भ घासका विस्तार किया और अपने आपको वहा स्थित करके पोषधशालामें दर्भ घासपर, पोषध और श्रमण भगवान् महावीरजीके पास गृहीत धर्मको पालता हुआ रहने लगा॥६९॥

तएण से आणन्दे समणोवासए उवासगपडि-

माओ उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ । पढमं उवासगपडिमं अहासुत्तं अहाकप्पं अहामग्गं अहातच्चं सम्मं काएणं फासेइ पालेइ, सोहेइ, तीरेइ, कित्तेइ, आराहेइ ॥ ७० ॥

तब वह आनन्द श्रमणोपासक उपासककी प्रतिमा (प्रतिज्ञा) को पालन करता हुआ विचरने लगा । उपासककी प्रथम प्रतिमा (प्रतिज्ञा) का यथासूत्र, यथाकल्प, यथामार्ग, यथातत्व सम्यक् प्रकारसे कायासे अभ्यास पालन, शोधन, साधन, कीर्तन, और आराधन किया ॥ ७० ॥

तए णं से आणन्दे समणोवासए दोच्चं उवासगपडिमं, एवं तच्चं, चउत्थं, पञ्चमं, छट्ठं, सत्तमं, अट्ठमं, नवमं, दसमं, एक्कारसमं जाव आराहेइ ॥७१॥

तब उस श्रमणोपासकने उपासककी दूसरी पडिमा (प्रतिज्ञा) की (आराधनाकी) फिर तृतीय, चतुर्थ, पचम, षष्ठम, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादश प्रतिज्ञाओंको सेवन किया ॥ ७१ ॥

तए णं से आणन्दे समणोवासए इमेणं एयारूवेणं उरालेणं विउलेणं पयत्तेणं पग्गहिएणं तवोकम्मेणं सुक्के जाव किसे धमणिसन्तए जाए ॥ ७२ ॥

तब यह आनन्द श्रमणोपासक इस प्रकार उदार, विपुल, पवित्र, प्रगृहीत तपस्या द्वारा शुष्क (सूकगया) होगया यावत् धूमणिके समान सूक गया ॥ ७२ ॥

तए णं तस्स आणन्दस्स समणोवासगस्स अन्न-या कयाइ पुव्वरत्ता जाव धम्मजागरिय जागरमाणस्स अय अज्झत्थिए ५ । "एव खलु अह इमेण जाव धमणिसन्तए जाए । त अत्थि ता मे उट्ठाणे कम्मे वले वीरिए पुरिसकार परक्कमे सद्धाधिइ सवेगे । त जाव ता मे अत्थि उट्ठाणे सद्धाधिइ सवेगे, जाव य मे धम्मायरिए धम्मोवएसए समणे भगव महा-वीरे जिणे सुहत्थी विहरइ, ताव ता मे सेय कल्ल जाव जलन्ते अपच्छिम मारणन्तिय संलेहणा झूस-णा झूसियस्स, भत्तपाण पडियाइक्खियस्स, काल अणवकङ्खमाणस्स विहरित्तए" । एव सम्पेहेइ, २ त्ता कल्ल पाउ जाव अपच्छिम मारणन्तिय जाव काल अणनकङ्खमाणे विहरइ ॥ ७३ ॥

तब अन्यदा समय उस श्रमणोपासक आनन्दके मनमें अर्धरात्रिके समय धर्म जागर्या जागते हुए यह अध्यास्थित सकल्प उत्पन्न हुआ । निश्चयसे अब मैं इस उदार तपस्या

द्वारा (यावत्) धूमणिके समान शुष्क होगया हू तौभी मेरेमें उपक्रम, वल, वीर्य, पुरुषात्कार, पराक्रम, श्रद्धा, वैराग्य आदि विद्यमान हैं। उद्यम, श्रद्धादि संवेगकी स्थिति भी है और धर्म्माचार्य्य, धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीरजी भी जिन सुहस्तिके समान विचरते हैं, इसलिये मुझे उचित है कि कल यावत् सूर्य्योदयके पश्चात् अपश्चिम मारणान्तिक संलेखनाकी जूषणाको जूषित करके अन्न पानका त्याग करके मृत्युकी कांक्षा रहित विचरू"। ऐसा विचार कर द्वितीय दिवस प्रकाशपने (यावत्) मारणान्तिक सस्तारक करके (यावत्) मृत्युकी इच्छा न करता हुआ वह विचरने लगा ॥ ७१ ॥

तए णं तस्स आणन्दस्स समणोवासगस्स अन्नया कयाइ सुभेणं अज्झवसाणेणं, सुभेण परिणामेण, लेसाहि विसुज्झमाणीहि तदावरणिज्जाण कम्माण खओवसमेणं ओहिनाणे समुप्पन्ने। पुरत्थिमेणं लवणसमुद्दे पञ्च जोयणसयाइ खेत्तं जाणइ पासइ, एव दक्खिणेणं पच्चत्थिमेणं य। उत्तरेण जाव चुल्लहिमवन्तं वासधर पव्वयं जाणइ पासइ। उड्ढं जाव सोहम्मं कप्प जाणइ पासइ। अहे जाव इमीसे रयण-

प्पभाए पुढवीए लोलुयच्चुय नरय चउरासीइवास सहस्सट्ठिइय जाणइ पासइ ॥ ७४ ॥

तत्र अन्यदा समय आनन्द श्रमणोपासकके शुद्ध अध्यवसान, शुभ परिणाम, लेशमात्र शुद्ध मनके होनेसे तथा ज्ञानके रोकनेवाले कर्म्मों के नाश करनेसे उसको अवधि ज्ञान प्राप्त हुआ । पूर्वदिशामें लवण समुद्र और ५०० योजन क्षेत्र (अवधिज्ञानके द्वारा) जाना और देखा, ऐसे ही दक्षिण और पश्चिम दिशामें देखा, उत्तरदिशामें वासधर पर्वत तक छोटे हिमालय (हेमवत)को जाना और देखा, उच्च दिशामें सौधर्म कल्प जाना और देखा, नीचे रत्नप्रभामें लोलुपाच्युत नामक प्रथम नरकावासको, जिसमें ८४००० वर्षकी स्थिति है, जाना और देखा ॥ ७४ ॥

तेण कालेण तेण समएण समणे भगव महावीरे समोसरिए । परिसा निग्गया जाव पडिगया ॥ ७५ ॥

उस काल, उस समय श्रमण भगवान् महावीरजी पधारे । पुरप (दर्शनार्थ) गये यावत् धर्मोपदेश सुनकर लौट गये ॥७५॥

तेण कालेण तेण समएण समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अन्तेवासी इन्दभूई नाम अणगारे

गोयमगोत्ते गं सत्तुस्सेहे, सम चउरससठाण सठिए, वज्जरिसहनाराय सङ्घयणे, कणगपुलगनिघसपम्ह-गोरे, उग्गतवे, दित्ततवे, तत्ततवे, घोरतवे, महा-तवे, उराले, घोरगुणे, घोरतवस्सी, घोरवम्भचेर-वासी, उच्छूढसरीरे, संखित्त विउल तेउलेसे, छट्टं छट्टेण अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं संजमेणं तवसा अप्पाण भावेमाणे विहरइ ॥ ७६ ॥

उस काल, उस समय श्रमण भगवान् महावीरजीके ज्येष्ठ और अन्तेवासि गौतम गोत्रीय मुनि इन्द्रभूतिजी जो सात हाथ लम्बे, चारों ओर सम सस्थान (आकार) सस्थित, वज्र, वृषभ नाराच सम देहधारी, निकष (कसौटी) पर घिसे हुये स्वर्ण समान श्वेतवर्णीय, उग्र, दीप्त, तप्त, घोर, और महान् तपके करनेहारे, उदार, अत्यन्तगुणवान्, महान् तपस्वी और ब्रह्मचारी, उरक्षुब्धशरीरी थे और जिन्होंने तेजुलेशाको वशमें किया हुआ था, छटे छटे (बेले ?) अन्न खानेसे तथा तपकर्म्म, संयम, तपसे अपना कल्याण करते हुये विचरते थे ॥ ७६ ॥

तएण से भगव गोयमे छट्ठक्खमण पारणगंसि पढमाए पोरिसीए सज्झाय करेइ, विइयाए पोरिसीए झाण झियाइ, तइयाए पोरिसीए अतुरियं -

असम्भन्ते मुहपत्तिं पडिलेहेइ, २ त्ता भायण वत्थाइ पडिलेहेइ, २ त्ता भायणवत्थाइ पमज्जइ, २ त्ता भायणाइ उग्गाहेइ, २ त्ता जेणेव समणे भगव महावीरे, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता समण भगव महावीर वन्दइ नमसइ, २ त्ता एव वयासी। "इच्छामि ण, भन्ते, तुब्भेहि अब्भणुणाए छट्ठक्खमणस्स पारणगसि वाणियगामे नयरे उच्च नीय मज्झिमाइ कुलाइ घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडित्तए। अहासुह, देवाणुप्पिया, मा पडिबन्ध करेह" ॥ ७७ ॥

तब भगवान् गौतमजीने षष्ठक्षमणके पारणाके समय (बेलाव्रतकी समाप्ति पर) प्रथम प्रहरमें स्वाध्याय किया, द्वितीय प्रहरमें ध्यान किया, तृतीय प्रहरमें अत्वरित, अचपल और असम्भ्रान्त भगवान् गौतमजी मुखपत्तिको प्रतिलेखित करके और भाजन (पात्र) वस्त्रादिको शुद्ध तथा प्रमार्जित करके, भाजनादिको ग्रहण करके जहा श्रमण भगवान् महावीरजी थे वहा जाकर श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके ऐसे बोले। हे भगवन्! यदि आप आज्ञा दें तो मेरी इच्छा है कि षष्ठ क्षमणके पारणाके लिये ऊच, सामान्य और मध्यम कुलके गृहोंके समुदायसे भिक्षादि

ग्रहण करूं (भगवान्ने उत्तर दिया) हे देवानुप्रिय! जिस प्रकार तुम्हें सुख हो (उस प्रकार करो) विलम्ब मत करो ॥७७॥

तएण भगव गोयमे समणेणं भगवया महावीरेण अब्भणुणाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तियाओ दूइपलासाओ चेइयाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता अतुरियमचवलमसम्भन्ते जुगन्तर परिलोयणाए दिट्ठीए पुरओ इरिय सोहेमाणे, जेणेव वाणियगामे नयरे, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता वाणियगामे नयरे उच्चनीयमज्झिमाइ कुलाइं घर समुदाणस्स भिक्खायरियाए अडइ ॥ ७८ ॥

तब भगवान् गौतमजीने श्रमण भगवान् महावीरजीसे आज्ञा पाकर श्रमण भगवान् महावीरजीके पाससे द्युतिपलाश उद्यानसे निकलकर अत्वरित, अचपल और असम्भ्रान्त दृष्टिसे एक युंगतक परिलोचन करते हुये जहा वाणिजग्राम नगर था वहा जाकर वाणिजग्राम नगरमें ऊच सामान्य और मध्यम कुलके गृहोके समुदायकी भिक्षा ग्रहण की ॥ ७८ ॥

तए ण मे भगव गोयमे वाणियगामे नयरे, जहा पणत्तीए तहा, जाव भिक्खायरियाए अडमाणे

१ साढेतीन हाथ प्रमाण देखते हुए।

अहापज्जत्त भत्तपाण सम्म पडिग्गाहेइ, २ त्ता वाणि यगामाओ पडिणिग्गच्छइ, २ त्ता कोल्लायस्स सन्नि वेसस्स अदूरसामन्तेण वईवयमाणे, वहुजण सद्द निसामेइ । वहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ ४। "एव खलु, देवाणुप्पिया, समणस्स भगवओ अन्ते वासी, आणन्दे नाम समणोवासए पोसहसालाए अपच्छिम जाव अणवकङ्खमाणे विहरइ' ॥ ७९ ॥

तब भगवान् गौतमजी वाणिजग्राम नगरमें पूर्वोक्त रीत्यानुसार भिक्षादि ग्रहण करते हुए यथापर्याप्त (जितनी इच्छा थी) अन्नपानका सम्यक् प्रकारसे सग्रह करके वाणिजग्राम नगरसे निकले और उन्होंने कोल्लाग सन्निवेशके निकट वार्त्तालाप करते हुए बहुत जनोंके शब्दोंको सुना । बहुतसे मनुष्य आपसमें इसतरह वार्त्तालाप करते थे। हे देवानुप्रियो! श्रमण भगवान्जीका अन्तेवासी आनन्द श्रमणोपासक पोषधशालामें अपश्चिम मारणान्तिक सलेखना करके, यावत् मृत्युकी इच्छासे रहित विचरता है ॥ ७९ ॥

तए ण तस्स गोयमस्स वहुजणस्स अन्तिए एय सोच्चा निसम्म अयमेयारूवे अज्झत्थिए ४ । "त गच्छामि ण, आणन्द समणोवासय पासामि" ।

एवं सम्पेहेइ, २ त्ता जेणेव कोल्लाए सन्निवेसे, जेणेव आणन्दे समणोवासए, जेणेव पोसहसाला, तेणेव उवागच्छइ ॥ ८० ॥

तब गौतमजीके मनमें बहुतजनोंके पास ऐसा श्रवण करके, इस रूपमें अध्यास्थित संकल्प उत्पन्न हुआ ॥ "इस कारण मैं जाता हू और आनन्द श्रमणोपासकको देखता हू।" ऐसा विचार करके जहा कोल्लाकसन्निवेश, आनन्द श्रमणो-पासक और पोषधशाला थी वहा गये ॥ ८० ॥

तएण से आणन्दे समणोवासए भगवं गोयमं एज्जमाणं पासइ, २ त्ता हट्ठ जाव हियए भगवं गोयमं वन्दइ, नमंसइ, २ त्ता एवं वयासी । "एवं खलु, भन्ते, अहं इमेणं उरालेणं जाव धमणिसन्तए जाए, नो संचाएमि देवाणुप्पियस्स अन्तियं पाउब्भवित्ताणं तिक्खुत्तो मुद्धाणेणं पाए अभिवन्दित्तए । तुब्भे णं, भन्ते, इच्छाकारेणं अणभिओएणं इओ चेव एह, जा णं देवाणुप्पियाणं तिक्खुत्तो मुद्धाणेणं पाएसु वन्दामि नमसामि" ॥ ८१ ॥

तब आनन्द श्रमणोपासक भगवान् गौतमजीको हुये देखकर और हृदयमें प्रसन्न होकर (यावत्)

गौतमजीको वदना नमस्कार करके ऐसे बोला । हे भगवन्! मैं इस उदार तपादिसे (यावत्) धमणिके (या शुष्कदृतिके) समान होगया हू और देवानुप्रियके पास आकर पायोंपर मस्तकसे तीनवार वन्दना करनेके समर्थ नहीं हू इसलिये, हे भगवन्! आप अपनी इच्छानुसार अभियोगरहित होकर यहा पधारें ताकि देवानुप्रियके पादुका पर तीनवार मस्तकसे वन्दना नमस्कार करू ॥ ८१ ॥

तए णं से भगवं गोयमे, जेणेव आणन्दे समणोवासए, तेणेव उवागच्छइ ॥ ८२ ॥

तब भगवान् गौतमजी जहा आनन्द श्रमणोपासक था, वहा गये ॥ ८२ ॥

तए णं से आणन्दे समणोवासए भगवओ गोयमस्स तिक्खुत्तो मुद्धाणेण पाएसु वन्दइ, नमसइ, २ त्ता एवं वयासी ॥ "अत्थि णं, भन्ते, गिहिणो गिहिमज्झा वसन्तस्स ओहिनाणे णं समुप्पज्जइ ?"। "हन्ता, अत्थि"।

"जइ णं, भन्ते, गिहिणो जाव समुप्पज्जइ, एव खलु, भन्ते, मम वि गिहिणो गिहिमज्झा वसन्त ओहिनाणे समुप्पन्ने । पुरत्थिमेणं लवणसमुद्दे प

जोयण सयाइं जाव लोलुयच्चुयं नरय जानामि पासामि" ॥ ८३ ॥

तब आनन्द श्रमणोपासक भगवान् गौतमजीके पाओ पर तीन बार मस्तकसे वन्दना नमस्कार करके ऐसे बोला । हे भगवन्! क्या गृहमें रहतेहुये गृहस्थीको अवधिज्ञान उत्पन्न होजाता है? । (गौतमस्वामी बोले) "(अवधि ज्ञान उत्पन्न) हो जाता है ॥ (आनन्दने कहा) हे भगवन्! यदि गृहस्थीको ज्ञानकी प्राप्ति हो जाती है तो निश्चयसे, हे भगवन्! मुझे गृहमें वास करतेहुये गृहस्थीकोभी अवधिज्ञान प्राप्त हुआ है (जिसके प्रभावमे मैं) पूर्वदिशामें लवणसमुद्र और ५०० योजनक्षेत्र (यावत्) लोलुपाच्युत नरकको जानता हू और देखता हू ॥ ८३ ॥

तएण से भगवं गोयमे आणन्दं समणोवासयं एवं वयासी । "अत्थि ण, आणन्दा, गिहिणो जाव समुप्पज्जइ । नो चेव ण एमहालए । त ण तुमं, आणन्दा, एयस्स ठाणस्स आलोएहि जाव तवोकम्म पडिवज्जाहि" ॥ ८४ ॥

तब भगवान् गौतमजी आनन्द श्रमणोपासकको ऐसे बोले। हे आनन्द! गृहस्थीको ज्ञानकी प्राप्ति तो हो जाती है परन्तु

इतनी ऊच नहीं । इसलिये, हे आनन्द ! तू इस स्थानकी आलोचना कर यावत् तपकर्म्मका दण्ड ग्रहण कर ॥ ८४ ॥

तएण से आणन्दे समणोवासए भगवं गोयमं एव वयासी । "अत्थि ण, भन्ते, जिणवयणे सन्ताण तच्चाण तहियाण सब्भूयाण भावाण आलोइज्जइ जाव पडिवज्जिज्जइ ?" ।

"नो तिणट्ठे समट्ठे" ।

"जइ ण, भन्ते, जिणवयणे सन्ताण जाव भावाण नो आलोइज्जइ जाव तवोकम्म नो पडिवज्जिज्जइ त ण, भन्ते, तुब्भे चेव एयस्स ठाणस्स आलोएह जाव पडिवज्जह" ॥ ८५ ॥

तब वह आनन्द श्रमणोपासक भगवान् गौतमजीको ऐसे बोला । हे भगवन्! "सत्य, यथार्थ, और सद्भूत भावकी आलोचना करना यावत् दण्ड ग्रहण करना क्या जिनधर्ममें (प्रतिष्ठित) है?"

(गौतमस्वामीजीने उत्तर दिया) "नहीं यह जिनधर्ममें (मान्य) नहीं है?"

(आनन्द बोला) हे भगवन्! यदि सत्य (यावत्) भावकी आलोचना करना और तपकर्मका दण्ड ग्रहण करना जिन-

वचनोंमें (मान्य) नहीं है तो, हे भगवन्! आपही इस स्थानकी आलोचना करें (यावत्) दण्ड लेवें ॥ ८५ ॥

तएण से भगवं गोयमे आणन्देणं समणोवासएण एवं वुत्ते समाणे, सङ्किए, कङ्खिए, विइगिच्छासमावन्ने, आणन्दस्स अन्तियाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता जेणेव दूइपलासे चेइये, जेणेव समणे भगवं महावीरे, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामन्ते गमणागमणाए पडिक्कमइ, २ त्ता एसणमणेसणं आलोएइ, २ त्ता भत्तपाणं पडिदंसेइ, २ त्ता समणं भगवं वन्दइ नमसइ, २ त्ता एवं वयासी। "एवं खलु, भन्ते, अहं तुब्भेहि अब्भणुणाए। तं चेव सव्वं कहेइ जाव। तएणं अहं सङ्किए ३ आणन्दस्स समणोवासगस्स अन्तियाओ पडिणिक्खमामि, २ त्ता जेणेव इह तेणेव हव्वमागए। तं णं, भन्ते, किं आणन्देणं समणोवासएणं तस्स ठाणस्स आलोएयव्वं जाव पडिवज्जेयव्वं, उदाहु मए?"।

"गोयमा इ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं

एव वयासी। "गोयमा, तुम चेव ण तस्स ठाणस्स आलोएहि, जाव पडिवज्जाहि, आणन्द च समणो वासय एयमट्ठ खामेहि" ॥ ८६ ॥

तब भगवान् गौतमजी आनन्द श्रमणोपासकसे ऐसा कहे जानेपर शका, काक्षा, सदेह उत्पन्न होनेपर, आनन्द के पाससे निकलकर, जहा दूतिपलाश उद्यान था और जहा श्रीश्रमण भगवान् महावीरजी विद्यमान थे, वहां गये और श्रमण भगवान् महावीरजीके निकट गमनागमनका प्रतिक्रमण करके, इच्छित और अनिच्छित वस्तुकी आलोचना करके, अन्नपान दिखाकर श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके ऐसे बोले । हे भगवन्! मैं आपकी आज्ञासे भिक्षा ग्रहण करने गया था इत्यादि (आगे सर्व वृत्तान्त कह सुनाया) तब वहा मैं शकित होकर आनन्द श्रमणोपासकसे लौटकर शीघ्र यहा आया हू सो हे भगवन्! क्या आनन्द श्रमणोपासकको इस स्थानकी आलोचना करना यावत् दण्ड लेना चाहिये या मुझे? श्रमण भगवान् महावीरजी (उत्तरमें) भगवान् गौतमको ऐसे बोले । हे गौतम! तूही इस स्थानकी आलोचना कर यावत् दण्ड ग्रहण कर और आनन्द श्रमणोपासकसे इस बातकी क्षमा माग ॥ ८६ ॥

तएण से भगव गोयमे समणस्स भगवओ

महावीरस्स "तह" त्ति एयमट्ठं विणएण पडिसुणेइ, २ त्ता तस्स ठाणस्स आलोएइ जाव पडिवज्जइ, आणन्दं च समणोवासयं एयमट्ठं खामेइ ॥ ८७ ॥

तब भगवान् गौतमजीने श्रमण भगवान् महावीरजीकी ("सत्य है" ऐसा वचन उच्चारण करके) यह बात विनयसे सुनी और उस स्थानकी आलोचनाकी यावत् दण्ड ग्रहण किया अत आनन्द श्रमणोपासकसे जाकर इस बातकी क्षमा मागी ॥ ८७ ॥

तएण समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ बहिया जणवय विहार विहरइ ॥ ८८ ॥

तब श्रमणभगवान् महावीरजी अन्यदा समय बाहिर किसी अन्य देशको विहार कर गये ॥ ८८ ॥

तएणं से आणन्दे समणोवासए बहूहिं सीलव्वएहि जाव अप्पाण भावेत्ता, वीस वासाइं समणोवासग परियागं पाउणित्ता, एक्कारस य उवासगपडिमाओ सम्म काएण फासित्ता, मासियाए सलेहणाए अत्ताण भूसित्ता, सट्ठि भत्ताइ अणसणाए छेदेत्ता, आलोइयपडिक्कन्ते, समाहिपत्ते, कालमासे कालं किच्चा, सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडिसगस्स महाविमाणस्स

उत्तरपुरत्थिमेण अरुणे विमाणे देवत्ताए उववन्ने। तत्थ ण अत्थेगइयाण देवाण चत्तारि पलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता । तत्थ ण आणन्दस्स वि देवस्स चत्तारि पलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता ॥ ८९ ॥

तब उस आनन्द श्रमणोपासकने बहुत शीलव्रतसे अपना कल्याण किया, बीसवर्षतक श्रमणोपासककी पर्यायको पाला, उपासककी एकादश प्रतिज्ञाओंको सम्यक्प्रकारसे कायासे आराधन किया एक मासतक सलेखनाके कालको आसेवन करके, ६० प्रकारके भक्तोंको छेदन करके फिर आलोचना और प्रतिक्रमण करके, समाधि प्राप्त की और कालके अवसर मृत्युको प्राप्त करके सौधर्म कल्पमें सौधर्म अवतसकके महाविमानके उत्तरपूर्वके मध्यकी दिशामें अरुण विमानमें देवता उत्पन्न हुआ । वहा कितनेक देवताओंकी चार पल्योपमकी स्थिति कही है । इसलिये आनन्द देवताकीभी चार पल्योपमकी स्थिति कही है ॥ ८९ ॥

"आणन्दे ण, भन्ते, देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएण ३ अणन्तर चय चइत्ता, कहि गच्छिहिइ, कहिं उववज्जिहिइ ?" ।

"गोयमा, महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ" ॥ ९० ॥

(गौतमजीने पूछा) हे भगवन् ! "आनन्द देवता देव-लोकसे आयु क्षय करके (?) कहा जावेगा और कहा उत्पन्न होगा ?" ।

(भगवान्ने उत्तर दिया) हे गौतम ! महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होगा ॥ ९० ॥

॥ निक्खेवो ॥

(निक्षेप —"एव खलु जम्बू समणेण जाव उवासगदसाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते)

सत्तमस्स अगस्स उवासगदसाणं पढमं अज्झयणं समत्त ॥

सप्तमाग उपासकदशा का प्रथम अध्ययन समाप्त हुआ ॥

वीयं अज्झयणं ।

(द्वितीय अध्ययन)

जइ ण, भन्ते, समणेण भगवया महावीरेण जाव सम्पत्तेण सत्तमस्स अंगस्स उवासगढसाण पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते, दोच्चस्स ण, भन्ते, अज्झयणस्स के अट्ठे पणत्ते ? ॥ ९१ ॥

(जम्बू स्वामीजी बोले) हे भगवन् ! यदि श्रमण भगवान्

उत्तरपुरत्थिमेण अरुणे विमाणे देवत्ताए उववन्ने। तत्थ ण अत्थेगइयाण देवाण चत्तारि पलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता । तत्थ ण आणन्दस्स वि देवस्स चत्तारि पलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता ॥ ८९ ॥

तब उस आनन्द श्रमणोपासकने बहुत शीलव्रतसे अपना कल्याण किया, बीसवर्षतक श्रमणोपासककी पर्यायको पाला, उपासककी एकादश प्रतिज्ञाओंको सम्यक्प्रकारसे कायासे आराधन किया एक मासतक सलेखनाके कालको आसेवन करके, ६० प्रकारके भक्तोंको छेदन करके फिर आलोचना और प्रतिक्रमण करके, समाधि प्राप्त की और कालके अवसर मृत्युको प्राप्त करके सौधर्म कल्पमें सौधर्म अवतसकके महाविमानके उत्तरपूर्वके मध्यकी दिशामें अरुण विमानमें देवता उत्पन्न हुआ । वहा कितनेक देवताओंकी चार पल्योपमकी स्थिति कही है । इसलिये आनन्द देवताकीभी चार पल्योपमकी स्थिति कही है ॥ ८९ ॥

"आणन्दे ण, भन्ते, देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएण ३ अणन्तर चय चइत्ता, कहि गच्छिहिइ, कहि उववज्जिहिइ ?" ।

"गोयमा, महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ" ॥ ९० ॥

(गौतमजीने पूछा) हे भगवन्! "आनन्द देवता देवलोकसे आयु क्षय करके (३) कहा जावेगा और कहा उत्पन्न होगा?"।

(भगवान्ने उत्तर दिया) हे गौतम! महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होगा ॥ ९० ॥

॥ निक्खेवो ॥

(निक्षेप.—"एव खलु जम्बू समणेण जाव उवासगदसाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते)

सत्तमस्स अंगस्स उवासगदसाणं पढमं अज्झयणं समत्तं ॥

सप्तमाग उपासकदशा का प्रथम अध्ययन समाप्त हुआ ॥

बीयं अज्झयणं ।

(द्वितीय अध्ययन)

जइ णं, भन्ते, समणेणं भगवया महावीरेणं जाव सम्पत्तेणं सत्तमस्स अंगस्स उवासगदसाणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पणत्ते, दोच्चस्स णं, भन्ते, अज्झयणस्स के अट्ठे पणत्ते? ॥ ९१ ॥

(जम्बू स्वामीजी बोले) हे भगवन्! यदि श्रमण भगवान्

महावीरजीने जो मोक्षको प्राप्त होगये हैं सप्तम अङ्ग उपासक-दशाके प्रथम अध्ययनके यह अर्थ कहे हैं, तो, हे भगवन्! द्वितीय अध्ययनके क्या अर्थ कहे हैं? ॥ ९१ ॥

एवं खलु, जम्बू, तेण कालेण तेण समएण चम्पा नाम नयरी होत्था। पुण्णभद्दे चेइए। जियसत्तु राया। कामदेवे गाहावइ। भद्दा भारिया। छ हिरण्ण कोडीओ निहाण पउत्ताओ, छ वड्ढि पउत्ताओ, छ पवित्थर पउत्ताओ। छ वया दसगोसाहस्सिएण वएण। समोसरण। जहा आणन्दो तहा निग्गओ तहेव सावयधम्म पडिवज्जइ। सा चेव वत्तव्वया जाव जेट्ठपुत्त मित्तनाइ आपुच्छित्ता, जेणेव पोसहसाला, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता जहा आणन्दो जाव समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिय धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताण विहरइ ॥ ९२ ॥

(सुधर्मा स्वामीजीने उत्तर दिया) हे जम्बू! उसकाल, उससमय चम्पा नामा एक नगरी थी। उसमें पूर्णभद्र उद्यान था। जितशत्रु राजा राज्य करता था। उस नगरीमें कामदेव गाथापति रहता था, जिसकी भद्रा भार्या थी। उसके पास ६ करोड स्वर्णमुद्रा निधानप्रयुक्त, ६ करोड

वृद्धिप्रयुक्त और ६ करोड प्रविस्तरप्रयुक्त थीं । दशहजार गौंका एक वर्ग, ऐसे ६ वर्ग थे । भगवान् महावीरस्वामीके समवसरणमें आनन्दके समान वह कामदेव भी गया उसी प्रकार ही श्रावकधर्मको अंगीकार किया, तथा उसी प्रकारही ज्येष्ठ पुत्र, मित्र और सम्बन्धियोंको पूछकर जहा पोषधशाला थी, वहा जाकर आनन्दके समान श्रवण भगवान् महावीर जीके पास ग्रहण किये हुए धर्म्मको पालता हुआ रहने लगा॥९२॥

तएणं तस्स कामदेवस्स समणोवासगस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि एगे देवे मायी मिच्छद्दिट्ठी अन्तियं पाउब्भूए ॥ ९३ ॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकके पास अर्ध रात्रिके समय कपटी और मिथ्यादृष्टि एक देवता प्रगट हुआ ॥ ९३ ॥

तए णं से देवे एग महं पिसायरूव विउव्वइ । तस्स ण देवस्स पिसायरूवस्स इमे एयारूवे वण्णावासे पण्णत्ते । सीस से गोकिलञ्जसंठाणसंठिय, सालिभसेल्लसरिसा से केसा कविलतेएण दिप्पमाणा, महल्लउट्टियाकभल्लसंठाण संठियं निडाल, मुगुस पुछ व तस्स भुमगाओ फुग्गफुग्गाओ विगयबीभच्छदंसणाओ, सीसघडिविणिग्गयाइ अच्छीणि वि-

गयवीभच्छदसणाड, कएणा जह सुप्पकत्तर चेव विग-यवीभच्छदसणिज्जा, उरब्भपुडसन्निभा से नासा, झु-सिराजमलचुल्लीसठाण सठिया दो वि तस्स नासा पुडया, घोडयपुछ व तस्स मसूइं कविलकविलाइ विगयवीभच्छदसणाड, उट्टा उट्टस्स चेव लम्वा, फालसरिसा से दन्ता, जिब्भा जह सुप्पकत्तर चेव विगयवीभच्छदसणिज्जा, हलकुडाल सठिया से हणु-या, गल्लकडिल्लच तस्स खड्ड फुट्ट कविल फरुसं महल्ल, मुइङ्गाकारोवमे से खन्धे, पुरवरकवाडोवमे से वच्छे, कोट्ठिया सठाण सठिया दो वि तस्स वाहा, निसापाहाण सठाण सठिया दो वि तस्स अग्गहत्था, निसालोढ सठाणसठियाओ हत्थेसु अगुलीओ, सिप्पि पुडगसठिया से नक्खा, एहवियपसेवओ व उरसि लम्वन्ति दो वि तस्स थणया, पोट्ट अयकोट्ठओ व वट्ट, पाणकलन्दसरिसा से नाही, सिक्कगसठाण सठिए से नेत्ते, किएणपुड सठाण सठिया दो वि तस्स वसणा, जमलकोट्ठियासठाणसठिया दो वि तस्स उरू, अज्जुणगुट्ठ व तस्स जाणूइ कुडिल कुडिलाइ

विगय वीभच्छ दंसणाइं, जड्डाओ करकडीओ लोमेहिं उवचियाओ, अहरी संठाणसठिया दो वि तस्स पाया, अहरीलोढ सठाण सठियाओ पाएसु अङ्गुलीओ, सिप्पि पुड सठिया से नक्खा ॥ ९४ ॥

तब उस देवताने एक महान् पिशाचरूपको धारण किया॥ उस पिशाचरूप देवताके उस रूपका इसप्रकार वर्णन है। उसका शीर्ष (सिर) गोकिलञ्ज (गायके चरनेका महान् भाजन) सस्थान सस्थित, केश शालि (धान) तुपाके सदृश और कपिल तेजसे दीप्यमान, ललाट महान् उष्ट्रिकाकपाल सस्थान सस्थित, भौं छिपकलीकी पुच्छके समान और रोम विलिस, विकृत तथा बीभत्स, (दर्शनायोग्य) थे उसके नेत्र घर्तुलाकारशिरके सदृश विकृत और बीभत्स, कर्ण शूर्पकर्त्तरके (छाज) समान विकृत और बीभत्स, नासिका उरभ्रपुट (मेप, मेंढा) सदृश और नासापुट चूल्हेके दोनों छिद्रोंके समान सस्थानसे संस्थित थे, उसकी दीर्घ, विकृत और बीभत्स श्मश्रु (दाढी) घोटक (घोडा) की पुच्छके समान, ओष्ठ उष्ट्र (ऊठ) के समान लम्बे, दात फाल (लोहमय कुशा) के सदृश, विकृत और बीभत्स जिह्वा शूर्पकर्त्तर समान, और उसके हनु (जबडे) हलकुद्दालके सदृश थे, उसकी कटाहसम कपोल गर्ताकार (मध्यभाग जिसका

गयवीभच्छदसणाइ, कएणा जह सुप्पकत्तर चेव विगयवीभच्छदसणिज्जा, उरब्भपुडसन्निभा से नासा, झुसिराजमलचुल्लीसठाण सठिया दो वि तस्स नासा पुडया, घोडयपुछ व तस्स मसूइं कविलकविलाइ विगयवीभच्छदसणाइ, उट्ठा उट्टस्स चेव लम्बा, फालसरिसा से दन्ता, जिब्भा जह सुप्पकत्तर चेव विगयवीभच्छदसणिज्जा, हलकुडाल सठिया से हणुया, गल्लकडिल्लच तस्स खड्ड फुट्ट कविल फरुस महल्ल, मुइङ्गाकारोवमे से खन्धे, पुरवरकवाडोवमे से वच्छे, कोट्ठिया सठाण सठिया दो वि तस्स वाहा, निसापाहाण सठाण सठिया दो वि तस्स अग्गहत्था, निसालोढ सठाणसठियाओ हत्थेसु अगुलीओ, सिप्पि पुडगसठिया से नक्खा, एहवियपसेवओ व उरसि लम्बन्ति दो वि तस्स थणया, पोट्ट अयकोट्ठओ व वट्ट, पाणकलन्दसरिसा से नाही, सिक्कगसठाण सठिए से नेत्ते, किएणपुड सठाण सठिया दो वि तस्स वसणा, जमलकोट्ठियासठाणसठिया दो वि तस्स उरू, अज्जुणगुट्ठ व तस्स जाणूइ कुडिल कुडिलाइं

विगय वीभच्छ दंसणाइं, जङ्घाओ करकडीओ लोमेहि उवचियाओ, अहरी संठाणसंठिया दो वि तस्स पाया, अहरीलोढ संठाण संठियाओ पाएसु अङ्गुलीओ, सिप्पि पुड संठिया से नक्खा ॥ ९४ ॥

तब उस देवताने एक महान् पिशाचरूपको धारण किया॥ उस पिशाचरूप देवताके उस रूपका इसप्रकार वर्णन है । उसका शीर्ष (सिर) गोकिलञ्ज (गायके चरनेका महान् भाजन) संस्थान संस्थित, केश शालि (धान) तुषाके सदृश और कपिल तेजसे दीप्यमान, ललाट महान् उष्ट्रिकाकपाल संस्थान संस्थित, भौं छिपकलीकी पुच्छके समान और रोम विक्षिप्त, विकृत तथा बीभत्स, (दर्शनायोग्य) थे उसके नेत्र वर्तुलाकारशिरके सदृश विकृत और बीभत्स, कर्ण शूर्पकर्त्तरके (छाज) समान विकृत और बीभत्स, नासिका उरभ्रपुट (मेष, मेंढा) सदृश और नासापुट चूल्हेके दोनों छिद्रोंके समान संस्थानसे संस्थित थे, उसकी दीर्घ, विकृत और बीभत्स श्मश्रु (दाढी) घोटक (घोडा) की पुच्छके समान, ओष्ठ उष्ट्र (ऊठ) के समान लम्बे, दांत फाल (लोहमय कुशा) के सदृश, विकृत और बीभत्स जिह्वा शूर्पकर्त्तर समान, और उसके हनु (जबडे) हलकुद्दालके सदृश थे, उसकी कटाहसम कपोल गर्ताकार (मध्यभाग जिसका

निम्न है) विदीर्ण, दीर्घ, परुष (कठोर) और महान् थी। उसके स्कन्ध मृदङ्गाकारके सदृश, वक्ष (छाती) श्रेष्ठ नगरके कपाट (दरवाज़ा) के समान, दोनों भुजा कुशलिका (कोठी) संस्थान संस्थित, दोनों अग्रहस्त शिलापाषाण (मुद्गादि दलन शिला) संस्थान संस्थित, हस्ताङ्गुली शिला पुत्रक संस्थान संस्थित और नख शुक्तिपुट संस्थित थे, उसके दोनों स्तन नापितप्रसेवक (नाईकी गुच्छी) समान छातीपर लटकते थे, उसका जठर लोहकुशूलके सदृश वृत्त (गोल) था, उसकी नाभि पानकलन्द (चबच्चा) समान और नेत्र शिक्यक (छिंका) संस्थान संस्थित थे, उसके दोनों वसन किण्वपुट संस्थान संस्थित, दोनों जाघ यमलकुशूलिक संस्थान संस्थित और विकृत तथा बीभत्स जानु अर्जुनगुच्छ (अर्जुन वृक्षके पत्तोंके गुच्छे) सदृश थे अपरञ्च उसकी जघा निर्मांस, प्रचुररोमयुक्त और उपचित थीं, उसके दोनों पाद पेषणशिला संस्थान संस्थित, अधमाङ्ग अङ्गुली शिलापुत्रक संस्थान संस्थित और नख शुक्तिपुट संस्थित थे ॥ ९४ ॥

लडहमडह जाणुए विगयभागभुग्गभुमए अवदालियवयणनिवरनिल्लालियग्ग जीहे सरडकयमालियाए उन्दुरमालापरिणद्धसुकयचिन्धे, नउल कयकण्णपूरे, सप्पकयवेगच्छे, अप्फोडन्ते, अभिगज्जन्ते,

भीममुक्कट्टहासे, नाणाविह पञ्चवर्णेहिं लोमेहिं उवचिए एगं मह नीलुप्पलगवलगुलिय अयसिकुसुमप्पगासं असि खुरधारं गहाय, जेणेव पोसहसाला, जेणेव कामदेवे समणोवासए, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता आसुरत्ते रुट्ठे कुविए चण्डिक्किए मिसिमिसीयमाणे कामदेवं समणोवासय एवं वयासी । "हं भो कामदेवा समणोवासया, अप्पत्थियपत्थिया, दुरन्तपन्तलक्खणा, हीण पुण चाउद्दसिया, हिरिसिरिधिइकित्ति परिवज्जिया, धम्मकामया पुणकामया सग्गकामया मोक्खकामया धम्मकंखिया पुणकंखिया सग्गकंखिया मोक्खकंखिया धम्मपिवासिया पुणपिवासिया सग्ग पिवासिया मोक्खपिवासिया, नो खलु कप्पइ तव, देवाणुप्पिया, ज सीलाइं वयाइं वेरमणाइं पच्चक्खाणाइ पोसहोववासाइ चालित्तए वा खोभित्तए वा खण्डित्तए वा भञ्जित्तए वा उज्झित्तए वा परिच्चइत्तए वा, तं जइ णं तुम अज्ज सीलाइं जाव पोसहोववासाइ न छड्डसि न भञ्जेसि, तो अहं अज्ज इमेण नीलुप्पल जाव असिणा

खण्डाखण्डिं करेमि, जहा ण तुम, देवाणुप्पिया, अट्ट दुहट्टवसट्टे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविज्जसि" ॥ ९५ ॥

उसके दोनों जानु लटकते थे और कम्पन करते थे, उसके भौं विकृत और नमित थे, अग्रजिह्वा अवदारित (widely opened)तथा मुखसे नि सारित थी, कृकलास (किरला) कृत मालिका और मूषिक माला चिन्हार्थ शरीरपर सुशोभित थीं, कर्ण नकुलकणजकसे पूर्ण थे, सर्पकृत वैकक्ष (हार) पहना हुआ था, इसप्रकारसे वह देवता कराःस्फोट करता हुआ अर्थात् हाथ मारता हुआ, घनध्वनि समान गर्जता हुआ, विशेष प्रकारसे हास करता हुआ, नानाविध पाच प्रकारके रोमसे उपचित होकर, एक महान् क्षुरधारा नीलोत्पल, गवल, गुलिका, अतसीकुसुमप्रकाशयुक्त तलवारको ग्रहन करके जहा पोपधशाला थी जहा कामदेव श्रमणोपासक था वहा गया, वहा जाकर (वह देवता) कोप दिखाता हुआ कामदेव श्रमणोपासकको ऐसे बोला ॥ हे अप्राथित प्रार्थिक! दुष्ट लाक्षणिक! हीनपुण्यचतुर्दशीक! ह्री, श्री, धृति, कीर्तिपरिवर्जित! धर्म्म, पुण्य, स्वर्ग, मोक्षकामक! धर्म्म, पुण्य, स्वर्ग, मोक्षइच्छुक! धर्म्म पुण्य स्वर्ग मोक्ष पिपासु कामदेव श्रमणोपासक! तुझे शीलव्रतके विरुद्ध प्रत्या

ख्यान, पोपधोपवास, त्यागना, क्षोभित करना, खण्डित करना, भंग करना, उद्धृत करना वा परित्याग करना नहीं कल्पताहै परन्तु यदि तूं आज शील (यावत्) पोपधोपवास न त्यागेगा और भग न करेगा तौ मैं आज इस नीलोत्पल (यावत्) तलवारसे तेरे खण्ड खण्ड करूगा, जिस कारण तू, हे देवानुप्रिय ! दु खोंके वश होकर असमय जीवन त्याग देगा ॥ ६५ ॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए तेण देवेणं पिसायरूवेणं एव वुत्ते समाणे, अभीए अतत्थे अणुविग्गे अक्खुभिए अचलिए असम्भन्ते तुसिणीए धम्मज्झाणोवगए विहरइ ॥ ९६ ॥

तब उस पिशाचरूप देवतासे ऐसा कहा जानेपर वह अभीत, अत्रस्त, अनुद्विग्न, अव्याकुल, अचलित, असम्भ्रान्त, तूष्णीक कामदेव श्रमणोपासक धर्म ध्यानमें स्थित रहा ॥९६॥

तएणं से देवे पिसायरूवे कामदेवं समणोवासयं अभीय जाव धम्मज्झाणोवगय विहरमाणं पासइ, २ त्ता दोच्च पि तच्च पि कामदेव एवं वयासी । "हं भो कामदेवा समणोवासया अपत्थियपत्थिया, जइ णं तुमं अज्ज जाव ववरोविज्जसि" ॥ ९७ ॥

तब यह पिशाचरूप देवता कामदेव श्रमणोपासकको अभीत यावत् धर्मध्यानमें स्थित देखकर कामदेवको दो तीनवार ऐसे बोला ॥ हे श्रमणोपासक कामदेव ! कुपथ इच्छक ! अगर तू आज (यावत्) शीलादिको न भंग करेगा तो तू आज मृत्युको प्राप्त होगा ॥ ९७ ॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए तेणं देवेणं दोच्च पि तच्च पि एवं वुत्ते समाणे, अभीए जाव धम्मज्झाणोवगए विहरइ ॥ ९८ ॥

तब यह कामदेव श्रमणोपासक उस देवतासे दो तीन बार ऐसा कहा जानेपर अभीत (यावत्) धर्मध्यानमें स्थित रहा ॥ ९८ ॥

तएणं से देवे पिसायरूवे कामदेवं समणोवासयं अभीयं जाव विहरमाणं पासइ, २त्ता आसुरत्ते ५ तिवलियं भिउडिं निडाले साहट्टु, कामदेवं समणोवासयं नीलुप्पल जाव असिणा खण्डाखण्डिं करेइ ॥ ९९ ॥

तब उस पिशाचरूप देवताने कामदेव श्रमणोपासकको अभीत (यावत्) विचरता हुआ देखकर, क्रोधमें मस्तकपर त्रिवलीक भ्रुकुटिको धारण करके, कामदेव श्रमणोपासकको नीलोत्पल तलवारसे भाग भाग किया ॥ ९९ ॥

तएण से कामदेवे समणोवासए तं उज्जल जाव दुरहियासं वेयणं सम्मं सहइ जाव अहियासेइ ॥१००॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकने उस अग्निमय और दु सहा वेदनाको पूर्ण शांतिके साथ भोगा यावत् सहन किया ॥१००॥

तएणं से देवे पिसायरूवे कामदेव समणोवासयं अभीय जाव विहरमाण पासइ, २ त्ता जाहे नो सचाएइ कामदेव समणोवासयं निग्गन्थाओ पावयणाओं चालित्तए वा खोभित्तए वा विपरिणामित्तए वा, ताहे सन्ते तन्ते परितन्ते सणियं सणियं पच्चोसकइ, २ त्ता पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता दिव्वं पिसायरूव विप्पजहइ, २ त्ता एगं मह दिव हत्थिरूवं विउवइ, सत्तङ्ग पइट्ठिय सम्म संठिय सुजायं, पुरओ उदग्ग पिट्ठओ वाराह अयाकुच्छि अलम्बकुच्छि पलम्बलम्बोदराधरकरं अब्भुग्गय मउल मल्लिया विमल धवलदन्त कञ्चणकोसीपविट्ठदन्तं आणामिय चावललिय संविल्लियग्गसोण्ड कुम्मपडिपुण्ण चलण वीसइ नक्खं अल्लीणपमाणजुत्तपुच्छ ॥ १०१ ॥

तब उस पिशाचरूप देवताने कामदेव श्रमणोपासकको

भयरहित (यावत्) विचरते हुये देखकर विचार किया "मैं कामदेव श्रमणोपासकको निर्ग्रन्थियोंके वचनोंसे चलायमान, क्षुभित और विपरिणामित करनेके समर्थ नहीं हूं" । अत उस पिशाचरूप देवताने निराश और श्रान्त होकर शनैं शनैं पीछे हटकर पोशधशालासे निकलकर दिव्य पिशाचरूपको त्यागकर एक महान् दिव्य हस्तीके रूपको धारण किया । यह रूप प्रतिष्ठित सात ७ अङ्गोंसे युक्त, सम्यक् प्रकारसे सस्थित अर्थात् मासोपचयसे निर्मित, सकल अगोपाङ्गसे सुजात था । उसका पूर्व भाग उदग्र अर्थात् शिर अत्युन्नत था, कुक्षि—नक-रीकी कुक्षिके सदृश अलम्ब (छोटी) थी, उस रूपके ओष्ठ और हस्त—गणेशके समान दीर्घ, दात—अभ्युद्गतमुकुल (खिलनेपर आई एक कली) और मालतीकी बेलके समान निर्मल और धवल सुवर्णके बन्धनमें प्रविष्ट थे, उस हस्तीरूपकी शुण्ड (सूड) नामित धनुषके सदृश सुन्दर तथा कुटिल थी, प्रतिपूर्ण चरण २० नखोंके समेत कूर्मके समान थे और पुच्छ आलीन प्रमाण युक्त थी ॥ १०१ ॥

मत्त मेहमिव गुलगुलेन्त मणपवण जइणवेग दिव्व हत्थिरूव विउव्वइ, २ त्ता जेणेव पोसहसाला जेणेव कामदेवे समणोवासए तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता कामदेव समणोवासय एव वयासी । "ह भो काम-

देवा समणोवासया, तहेव भणइ जाव न भञ्जेसि, तो ते अज्ज अहं सोण्डाए गिण्हामि, २ त्ता पोसहसालाओ नीणेमि, २ त्ता उड्ढं वेहासं उव्विहामि, २ त्ता तिक्खेहिं दन्तमुसलेहिं पडिच्छामि, २ त्ता अहे धरणि तलंसि तिक्खुत्तो पाएसु लोलेमि, जहा णं तुमं अट्टदुहट्टवसट्टे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविज्जसि" ॥ १०२ ॥

मत्तमेघके समान गर्जते हुये, मन और पवनके वेगको जयन करते हुये दिव्य हस्तिके रूपको धारण करके, जहा पौषधशाला थी और जहा कामदेव श्रमणोपासक था वहा जाकर कामदेव श्रमणोपासकको ऐसे बोला। हे श्रमणोपासक कामदेव! यदि तू शीलादिको यावत् भंग न करेगा (इसी प्रकार ही कहा) तो मैं आज तुझे शूण्डसे पकडकर पोषधशालासे लेजाकर उच्चवायुमें फेंकूंगा, ऐसा करके तीक्ष्ण दन्तमुसलोंपर ग्रहण करूगा, ऐसा करके नीचे पृथ्वीपर तीन बार पाओंके नीचे मर्दन करूगा (मलूगा) जिससे तू आर्त और दु खके वश होकर असमय जीवनसे मुक्त हो जावेगा ॥१०२॥

तएण से कामदेवे समणोवासए तेणं देवेणं हत्थिरूवेण एवं वुत्ते समाणे, अभीए जाव विहरइ॥१०३॥

तब वह कामदेव श्रमणोपासक उस हस्तिरूप देवतासे ऐसा कहा जानेपर भयरहित (यावत्) धर्मध्यानमें स्थिर रहा॥१०३॥

तएण से देवे हत्थिरूवे कामदेव समणोवासय अभीय जाव विहरमाण पासइ, २ त्ता दोच्च पि तच्च पि कामदेव समणोवासय एव वयासी । "हं भो कामदेवा" तहेव जाव सोवि विहरइ ॥ १०४ ॥

तब वह हस्तिरूप देवता कामदेव श्रमणोपासकको अभीत (यावत्) विचरते हुये देखकर दो तीन वार कामदेव श्रमणोपासकको ऐसे बोला । भो कामदेव ! उसी प्रकार कहा । यावत् वह धर्ममें दृढ रहा ॥ १०४ ॥

तएण से देवे हत्थिरूवे कामदेव समणोवासय अभीय जाव विहरमाण, २ त्ता आसुरत्ते ४ कामदेव समणोवासय सोण्डाए गिण्हेइ, २ त्ता उड्ढं वेहास उव्विहइ, २ त्ता तिक्खेहि दन्तमुसलेहि पडिच्छइ, २ त्ता अहे धरणितलंसि तिक्खुत्तो पाएसु लोलेइ ॥

तब उस हस्तिरूप देवताने कामदेव श्रमणोपासकको अभीत (यावत्) विचरते हुये देखकर क्रोधमें भरकर कामदेव श्रमणोपासकको शूण्डसे पकडकर, ऊपर फैंककर, तीक्ष्ण दन्तमुपलोंपर ग्रहण किया और फिर धरतिपर पाओंके नीचे मर्दन किया ॥ १०५ ॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए त उज्जलं जाव अहियासेइ ॥ १०६ ॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकने उस अग्निमय (यावत्) वेदनाको सहन किया ॥ १०६ ॥

तएणं से देवे हत्थिरूवे कामदेवं समणोवासयं जाहे नो संचाएइ जाव सणियं सणियं पच्चोसक्कइ, २ त्ता पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता दिव्वं हत्थिरूवं विप्पजहइ, २ त्ता एगं महं दिव्व सप्परूवं विउव्वइ, उग्गविसं चण्डविसं घोरविसं महाकायं मसीमूसाकालग नयणविसरोसपुण्णं अञ्जणपुञ्जनिगरप्पगास रत्तच्छ लोहियलोयणं जमल जुयल चञ्चलजीहं धरणीयलवेणिभूयं उक्कड फुड कुडिल जडिल कक्कस वियड फुडाडोव करण दच्छं ॥ १०७ ॥

तब उस हस्तिरूप देवताने अपने आपको कामदेव श्रमणोपासकको धर्मसे विपरिणामित करनेके असमर्थ जानकर, शनैः शनैः पीछे हटकर पोषधशालासे निकलकर दिव्यहस्तिरूपको त्यागकर एक महान् दिव्य सर्परूपको धारण किया। उसका रूप उग्र, चण्ड तथा घोरविषसे युक्त था और महा शरीर मूषिक या स्याहीके समान काला ,था, दृष्टिविष रोष

(क्रोध) से पूर्ण थी, अञ्जनपुञ्ज समूहके समान उसका प्रकाश था, नेत्र रुधिरके समान रक्तास थे और दो जिह्वा ममस्थ चपल थीं, अपरच उसका स्वरूप (कृष्णत्व और दीर्घत्वमें) पृथ्वीके केश· बन्धके समान दीखता था और उत्कृष्ट स्फुट कुटिल जटिल कर्कश निकट फणाडम्बर करनेमें वह दक्ष और तत्पर था ॥१०७

लोहागरधम्ममाणधमधमेन्तघोस अणागलियति· व्वचण्डरोसं सप्परूव विउवइ, २ त्ता जेणेव पोसह· साला जेणेव कामदेवे समणोवासए, तेणेव उवाग· च्छइ, २ त्ता कामदेव समणोवासय एव वयासी। "ह भो कामदेवा समणोवासया, जाव न भञ्जेसि, तो ते अज्जेव अह सरसरस्स काय दुरुहामि, २ त्ता पच्छि· मेण भाएण तिक्खुत्तो गीव वेढेमि, २ त्ता तिक्खाहिं विसपरिगयाहिं दाढाहिं उरसि चेव निकुट्टेमि, जहा ण तुम अट्टदुहट्टवसट्टे अकाले चेव जीवियाओ वव· रोविज्जसि" ॥ १०८ ॥

लोहाकरकी धौंकनीके धमधम शब्दके समान शब्द करते हुये और अनाकलित तीव्र और चण्ड क्रोधको प्रकट करते हुये सर्परूपको धारण करके, जहा पोषधशाला और श्रमणो· पासक कामदेव था, वहा जाकर कामदेव श्रमणोपासकको

ऐसे वोला। हे श्रमणोपासक कामदेव! यदि तू शीलादिको भंग न करेगा, तो मैं आज रेंगते हुये तेरे शरीर पर चढ जाऊंगा, ऐसा करके पुच्छसे तीनवार कंठको परिवेष्टन करूंगा फिर तीक्ष्ण विषपरिगत (विपसे भरे हुये) दष्ट्राओंसे तेरे हृदयमें प्रहार करूगा जिससे तू आर्त और दु खके वश होकर अस-मय जीवनसे विमुक्त हो जावेगा ॥ १०८ ॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए तेणं देवेणं सप्परूवेणं एवं वुत्ते समाणे, अभीए जाव विहरइ ॥ सो वि दोच्चं पि तच्चं पि भणइ, कामदेवो वि जाव विहरइ ॥ १०९ ॥

तब वह कामदेव श्रमणोपासक उस सर्परूप देवतासे ऐसा कहा जानेपर भी अभीत (यावत्) धर्मध्यानमें स्थिर रहा। देवताने उसी प्रकारही दो तीनवार कहा परन्तु कामदेव भी यावत् अभीत यावत् धर्ममें दृढ रहा ॥ १०९ ॥

तए णं से देवे सप्परूवे कामदेवं समणोवासयं अभीयं जाव पासइ, २ त्ता आसुरत्ते ४ कामदेवस्स समणोवासयस्स सरसरस्स कायं दुरुहइ, २ त्ता पच्छिमभाएणं तिक्खुत्तो गीवं वेढेइ, २ त्ता तिक्खाहिं विस-परिगयाहिं दाढाहिं उरसि चेव निकुट्टेइ ॥ ११० ॥

तव वह सर्परूप देवता कामदेव श्रमणोपासकको भयरहित (यावत्) देख करके क्रोधसे कामदेव श्रमणोपासकके शरीरपर रेंगते हुये चढ़गया, ऐसा करके पुच्छसे तीनवार कंठको वेष्टित किया फिर तीक्ष्ण विषयुक्त दाढ़ोंसे हृदयमें प्रहार किया ॥ ११० ॥

तए णं से कामदेवे समणोवासए त उज्जल जाव अहियासेइ ॥ १११ ॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकने उस अग्निमय यावत् वेदनाको सम्यक् प्रकारसे सहन किया ॥ १११ ॥

तएणं से देवे सप्परूवे कामदेवं समणोवासय अभीय जाव पासइ, २ त्ता जाहे नो सचाएइ कामदेवं समणोवासयं निग्गन्थाओ पावयणाओ चालित्तए वा खोभित्तए वा विपरिणामित्तए वा, ताहे सन्ते ३ सणियं सणियं पच्चोसक्कइ, २ त्ता पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता दिव्वं सप्परूवं विप्पजहइ, २ त्ता एगं महं दिव्वं देवरूवं विउव्वइ हारविराइयवच्छं जाव दसदिसाओ उज्जोवेमाणं पभासेमाणं पासाईयं दरिसणिज्जं अभिरूवं पडिरूवं ॥ ११२ ॥

तब उस सर्परूप देवताने कामदेव श्रमणोपासकको अभीत

(यावत्) विचरते हुए देखकर विचार किया–"मैं कामदेव श्रमणोपासकको धर्मसे चलायमान चोभित वा विपरिणामित करनेके समर्थ नहीं हूं" ऐसे विचारकर श्रान्त होकर शनैं शनैं पीछे हटकर पोषधशालासे निकलकर दिव्यसर्परूपको त्यागकर एक महान् दिव्य देवरूपको धारण किया, उस देवरूपकी छाती हारादिसे सुशोभित थी, यावत् वह चित्ता-ल्हादक, दर्शनीय, मनोज्ञ, वा मनोहररूप दश दिशाओंमें उद्योत तथा प्रकाश करता था और शोभा देता था ॥११७॥

दिव्वं देवरूवं विउव्वइ, २ त्ता कामदेवस्स समणोवासयस्स पोसहसालं अणुप्पविसइ, २ त्ता अन्तलिक्खपडिवन्ने सखिङ्खिणियाइं पञ्चवण्णाइं वत्थाइं पवरपरिहिए कामदेवं समणोवासयं एवं वयासी। "हं भो कामदेवा समणोवासया, धन्ने सि णं तुमं, देवाणुप्पिया, सम्पुण्णे कयत्थे कयलक्खणे, सुलद्धे णं तव, देवाणुप्पिया, माणुस्सए जम्मजीवियफले, जस्स णं तव निग्गन्थे पावयणे इमेयारूवा पडिवत्ती लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया। एवं खलु, देवाणुप्पिया, सक्के देविन्दे देवराया जाव सक्कंसि सीहा-

सणसि चउरासीईए सामाणिय साहस्सीए जाव अन्नेसिं च बहूण देवाण य देवीण य मज्झगए एवमाइक्खइ ४। """एवं खलु, देवा, जम्बुद्दीवे दीवे भारहे वासे चम्पाए नयरीए कामदेवे समणोवासए पोसहसालाए पोसहिए बम्भचारी जाव दब्भसथारोवगए समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तियं धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ। नो खलु से सक्का केणइ देवेण वा दाणवेण वा जाव गन्धव्वेण वा निग्गन्थाओ पावयणाओ चालित्तए वा खोभित्तए वा विपरिणामित्तए वा ""। तएणं अहं सक्कस्स देविन्दस्स देवरण्णो एयमट्ठं असद्दहमाणे ३ इहं हव्वमागए। तं अहो णं, देवाणुप्पिया, इड्ढी ६ लद्धा ३, तं दिट्ठा णं, देवाणुप्पिया, इड्ढी जाव अभिसमन्नागया। तं खामेमि णं, देवाणुप्पिया, खमन्तु मज्झ देवाणुप्पिया, खन्तुमरुहन्ति णं देवाणुप्पिया, नाइं भुज्जो करणयाए" त्ति कट्टु पायवडिए पञ्जलिउडे एयमट्ठं भुज्जो भुज्जो खामेइ, २ त्ता जामेव दिसं पाउब्भूए, तामेव दिसं पडिगए॥ ११३॥

ऐसे दिव्य देवताके रूपको धारणकर, कामदेव श्रमणोपासकके पास पोषधशालामें प्रवेश करके, आकाशमें स्थित होकर, क्षुद्र (छोटी) घण्टिकायुक्त पाचवर्णके श्रेष्ठ वस्त्रोंसे परिहित होकर कामदेव श्रमणोपासकको (वह देवता) ऐसे बोला । "हे कामदेव श्रमणोपासक ! तू धन्य है, हे देवानुप्रिय ! तू संतोषी, कृतार्थ या शुभलक्षणीक है, हे देवानुप्रिय ! तूने मनुष्य जातिमें जन्म तथा जीवनके फलको प्राप्तकर लिया है क्योंकि तूने निर्ग्रन्थियोंके वचनोंपर इतनी दृढता प्राप्त लब्ध वा सम्प्राप्त करली है । हे देवानुप्रिय ! शक्र नामक देवेन्द्र और देवराजने (यावत्) शक्र सिंहासनारूढ होकर ८४००० सामानिक यावत् अन्य देवता वा देवियोंके मध्यमें इस प्रकार कहा था। हे देवानुप्रियो ! निश्चय करके जम्बुद्वीपके अन्तर्गत भारतवर्षमें चम्पा नामा नगरीमें ब्रह्मचारी कामदेव श्रमणोपासक पोषधशालामें दर्भ घासपर श्रमण भगवान् महावीरजीके पास ग्रहण किये हुये धर्मको पालता हुआ रहता है ॥ सत्यता कोई देवता, दानव यावत् गन्धर्व उसको जिन प्रवचनोंसे चलायमान, क्षुभित या विपरिणामित करने को समर्थ नहीं है" । तब मैं शक्रेन्द्रकी इस बातपर श्रद्धा न करके शीघ्रही इधर आगया । अहो ! देवानुप्रिय ! तूने ऋद्धि प्राप्त कर ली है और अब मैंने देखा है कि तू सफलीभूत हुआ है, इस कारण, हे देवानुप्रिय ! मैं क्षमा मागता हू अत आप मुझे

क्षमा करें क्योंकि देवानुप्रियको क्षमा करना ही उचित है, आगे कदापि मैं ऐसा न करूंगा। ऐसे कहकर वह देवता पाओंपर गिर पडा और प्राञ्जलिभूत होकर (हाथ जोडकर) पुन पुन कुचालकी क्षमा ग्रहण करके जिस दिशासे प्रकट हुआ था उसी दिशाको चला गया ॥ ११३ ॥

तएण से कामदेवे समणोवासए "निरुवसग्गम्" इइ कट्टु पडिमं पारेइ ॥ ११४ ॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकने निरुपसर्ग अर्थात् परिषहसे मुक्त होकर धर्मका पालन किया ॥ ११४ ॥

तेण कालेण तेण समएण समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ ॥ ११५ ॥

उस काल, उस समय श्रमण भगवान् महावीरजी (यावत) वहा पधारे ॥ ११५ ॥

तएण से कामदेवे समणोवासए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे "एव खलु समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ, त सेयं खलु मम समणं भगवं महावीरं वन्दित्ता नमंसित्ता तओ पडिणियत्तस्स पोसहं पारित्तए"त्ति कट्टु एवं सम्पेहेइ ... सुद्धप्पावेसाइं वत्थाइं

क्खित्ते सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता च चम्प नगरिं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, २ त्ता जेणेव पुणभद्दे चेइए जहा सङ्खो जाव पज्जुवासइ ॥ ११६ ॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकने यह समाचार प्राप्त करके मनमें ऐसा विचार किया । "निश्चयसे श्रमण भगवान् महावीरजी (यावत्) यहां पधारे हैं, इसलिये श्रेष्ठ हो यदि मैं श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके वहांसे वापिस लौटकर पोषधोपवास सेवन करूं" ऐसा विचारकर शुद्ध वस्त्र यावत् हलके और बहुमूल्य आभरण शरीर पर अलङ्कृत करके, मनुष्यवर्गसे परिक्षिप्त हुआ २ अपने घरसे निकला, और चम्पा नगरीके मध्यमें पूर्णभद्र उद्यानमें जाकर उसने सङ्खके समान यावत् श्रमण भगवान्जीकी सेवा भक्ति की॥११६॥

तएणं समणे भगवं महावीरे कामदेवस्स समणोवासयस्स तीसे य जाव धम्मकहा समत्ता ॥ ११७ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजीने कामदेव श्रमणोपासकको और उसके सहचरोंको धर्मोपदेश दिया यावत् समाप्त होनेपर श्रोतागण लौट गये ॥ ११७ ॥

"कामदेवा" इ समणे भगवं महावीरे कामदेवं समणोवासयं एवं वयासी । "से नूणं, कामदेवा, तुब्भं पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि एगे देवे अ

पाउब्भूए। तएणं से देवे एगं महं दिव्वं पिसायरूवं विउव्वइ, २ त्ता आसुरत्ते ४ एगं महं नीलुप्पल जाव असिं गहाय तुमं एवं वयासी। "" हं भो काम-देवा जाव जीवियाओ ववरोविज्जसि' "। तं तुमं तेणं देवेणं एवं वुत्ते समाणे अभीए जाव विहरसि" ॥ एवं वण्णगरहियातिण्णि वि उवसग्गा तहेव पडिउच्चारेयव्वा जाव देवो पडिगओ॥ "से नूणं कामदेवा अट्ठे समट्ठे"?। "हन्ता, अत्थि" ॥ ११८ ॥

(कामदेवकी तरफ मुखातिब होकर) श्रमण भगवान् महावीरजी कामदेव श्रमणोपासकको ऐसे बोले ॥ हे कामदेव! निश्चयसे क्या तेरे पास अर्ध रात्रिके समय एक देवता प्रगट हुआ था? उस देवताने एक महादिव्य पिशाचरूपको धारण करके क्रोधसे एक महान् नीलोत्पल यावत् असिको ग्रहण करके तुझे ऐसे कहा। "" हे कामदेव! यदि तू शीलादिको भंग न करेगा तो यावत् जीवनसे मुक्त हो जावेगा " "। तब तू उस देवतासे ऐसा कहा जानेपर भयरहित यावत् धर्ममें स्थिर रहा ॥ इसके अनन्तर तीनोंही उपसर्गोंका वृत्तान्त उसी प्रकार उच्चारण करना चाहिये यावत् देवता चला गया ॥ हे कामदेव! निश्चयसे क्या यह बात सत्य है? ॥ (कामदेवने उत्तर दिया) हे भगवन्! "यथार्थ है" ॥ ११८ ॥

"अज्जो" इ समणे भगवं महावीरे वहवे समणे निग्गन्थे य तिग्गन्थीओ य आमन्तेत्ता एवं वयासी। " जइ ताव, अज्जो, समणोवासगा गिहिणो गिहिमज्झा वसन्ता दिव्वमाणुसतिरिक्ख जोणिए उवसग्गे सम्म सहन्ति जाव अहियासेन्ति, सक्कापुणाई, अज्जो, समणेहि निग्गन्थेहि दुवालसङ्गं गणिपिडगं अहिज्जमाणेहि दिव्वमाणुसतिरिक्ख जोणिए सम्मं सहित्तए जाव अहियासित्तए" ॥ ११९ ॥

श्रमण भगवान् महावीरजी वहुत श्रमण, नैर्ग्रन्थ और साध्वीयोंको बुलाकर ऐसे बोले। " हे आर्यो ! यदि श्रमणोपासक गृहस्थी गृहमें रहते हुये भी देव, मनुष्य या तिर्यञ्चयोनिक उपसर्गोंको सम्यक् प्रकारसे सहन करते हैं तो फिर, हे आर्य्यो ! निर्ग्रन्थियोंको जो द्वादशांगके छात्र हैं अवश्यमेव पूर्ण शान्तिके साथ देव, मनुष्य और तिर्यञ्च योनिक उपसर्ग श्रेष्ठ रीतिसे सहन करने चाहियें ॥ ११६ ॥

तओ ते वहवे समणा निग्गन्था य निग्गन्थीओ य समणस्स भगवओ महावीरस्स "तह"त्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणन्ति ॥ १२० ॥

तब सब श्रमण नैर्ग्रन्थ वा साध्वीयोंने श्रमण भगवान्

महावीरजीके, ("सत्य है" ऐसा वचन उच्चारण करके) इस अर्थको विनयसे श्रवण किया ॥ १२० ॥

तएण से कामदेवे समणोवासए हट्ठ जाव समण भगवं महावीर पसिणाइ पुच्छइ, अट्ठमा-दियइ, समण भगवं महावीर तिक्खुत्तो वन्दइ नमसइ, २ त्ता जामेव दिस पाउब्भूए, तामेव दिस पडिगए ॥ १२१ ॥

तव वह कामदेव श्रमणोपासक प्रसन्न होकर यावत् श्रमण भगवान् महावीरजीसे प्रश्न पूछकर और उत्तर ग्रहण करके श्रमण भगवान् महावीरजीको तीनवार वन्दना नमस्कार करके जिस दिशासे प्रगट हुआ था उसी दिशाको चला गया ॥१२१॥

तएणं समणे भगव महावीरे अन्नया कयाइ चम्पाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता वहिया जणवयविहार विहरइ ॥ १२२ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजी अन्यदा समय चम्पा नगरीसे निकलकर बाहिर अन्य देशको विहारकर गये॥१२२॥

तएण से कामदेवे समणोवासए पढमं उवासग-पडिमं उवसम्पज्जित्ताण विहरइ ॥ १२३ ॥

तब वह कामदेव श्रमणोपासक उपासककी प्रथम प्रतिज्ञा को पालता हुआ विचरने लगा ॥ १२३ ॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए बहूहिं जाव भावेत्ता वीसं वासाइं समणोवासग परियाग पाउणित्ता, एक्कारस उवासग पडिमाओ सम्मं काएण फासेत्ता, मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता, सट्ठिं भत्ताइ अणसणाए छेदेत्ता, आलोइय पडिक्कन्ते, समाहिपत्ते, कालमासे कालं किच्चा, सोहम्मे कप्पे सोहम्म वडिंसयस्स महाविमाणस्स उत्तरपुरत्थिमेणं अरुणाभे विमाणे देवत्ताए उववन्ने । तत्थणं अत्थेगइयाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पणत्ता । कामदेवस्स वि देवस्स चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पणत्ता ॥ १२४ ॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकने बहुत शीलव्रतसे अपना कल्याण किया, बीस वर्षतक श्रमणोपासककी पर्यायको पाला, उपासककी एकादश प्रतिज्ञायोंको श्रेष्ठ रीतिसे कायासे पालन किया, मासिक सलेखनाकी जूषणाको जूषित करके, ६० प्रकारके अन्नसे पृथक् रहकर आलोचना और प्रतिक्रमण करके समाधि प्राप्तकी और कालके अवसरपर मृत्यु पाकर सौधर्म

महावीरजीके, ("सत्य है" ऐसा वचन उच्चारण करके) इस अर्थको विनयसे श्रवण किया ॥ १२० ॥

तएण से कामदेवे समणोवासए हट्ट जाव समण भगव महावीर पसिणाइ पुच्छइ, अट्ठमाढियइ, समण भगव महावीर तिक्खुत्तो वन्दइ नमसइ, २ त्ता जामेव दिस पाउब्भूए, तामेव दिस पडिगए ॥ १२१ ॥

तव यह कामदेव श्रमणोपासक प्रसन्न होकर यावत् श्रमण भगवान् महावीरजीसे प्रश्न पूछकर और उत्तर ग्रहण करके श्रमण भगवान् महावीरजीको तीनवार वन्दना नमस्कार करके जिस दिशासे प्रगट हुआ था उसी दिशाको चला गया ॥१२१॥

तएण समणे भगव महावीरे अन्नया कयाइ चम्पाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता वहिया जणवयविहार विहरइ ॥ १२२ ॥

तव श्रमण भगवान् महावीरजी अन्यदा समय चम्पा नगरीसे निकलकर वाहिर अन्य देशको विहारकर गये ॥१२२॥

तएण से कामदेवे समणोवासए पढमं उवासगपडिम उवसम्पज्जित्ताण विहरइ ॥ १२३ ॥

तब वह कामदेव श्रमणोपासक उपासककी प्रथम प्रतिज्ञा को पालता हुआ विचरने लगा ॥ १२३ ॥

तएणं से कामदेवे समणोवासए वहूहिं जाव भावेत्ता वीसं वासाइ समणोवासग परियाग पाउणित्ता, एक्कारस उवासग पडिमाओ सम्म काएण फासेत्ता, मासियाए संलेहणाए अप्पाणं भूसित्ता, सट्ठि भत्ताइ अणसणाए छेदेत्ता, आलोइय पडिक्कन्ते, समाहिपत्ते, कालमासे काल किच्चा, सोहम्मे कप्पे सोहम्म वडिंसयस्स महाविमाणस्स उत्तरपुरत्थिमेणं अरुणाभे विमाणे देवत्ताए उववन्ने । तत्थणं अत्थेगइयाण देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । कामदेवस्स वि देवस्स चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥ १२४ ॥

तब उस कामदेव श्रमणोपासकने बहुत शीलव्रतसे अपना कल्याण किया, बीस वर्षतक श्रमणोपासककी पर्यायको पाला, उपासककी एकादश प्रतिज्ञाओंको श्रेष्ठ रीतिसे कायासे पालन किया, मासिक संलेखनाकी जूषणाको जूषित करके, ६० प्रकारके अन्नसे पृथक् रहकर आलोचना और प्रतिक्रमण करके समाधि प्राप्तकी और कालके अवसरपर मृत्यु पाकर सौधर्म

कल्पमें सौधर्म्मावतसक महाविमानके उत्तरपूर्वके मध्यकी दिशामें अरुणाभ विमानमें देवता उत्पन्न हुआ। वहां कितनेक देवताओंकी चार पल्योपमकी स्थिति कही है। कामदेव देवताकी भी चार पल्योपमकी स्थिति हुई है ॥ १२४ ॥

"से णं, भन्ते, कामदेवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणन्तरं चय चइत्ता, कहिं गमिहिइ, कहिं उववज्जिहिइ" ?

"गोयमा, महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ" ॥१२५॥

(गौतमजीने पूछा) हे भगवन् ! यह कामदेव उस देवलोकसे आयु, भव, स्थिति क्षय करके अनन्तर कहां जावेगा और कहां उत्पन्न होगा ?"

(भगवान्ने उत्तर दिया) " हे गौतम ! महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होगा" ॥ १२५ ॥

॥ निक्खेवो ॥

(निक्षेप)

सत्तमस्स अगस्स उवासगदसाणं वीयं अज्झयणं समत्तं ॥

॥ सप्तमाग उपासकदशाका द्वितीय अध्ययन समाप्त हुआ ॥

तइयं अज्झयणं ।

तृतीय अध्ययन

उक्खेवो तइयस्स अज्झयणस्स ॥

तृतीय अध्ययनका उत्क्षेप ।

एव खलु, जम्बू, तेणं कालेणं तेण समएणं वाणा-रसी नाम नयरी। कोट्ठए चेइए। जियसत्तूराया ॥१२६॥

हे जम्बू! निश्चयसे उस काल, उस समय बनारस नामवाली एक नगरी थी। उसमें कोष्टक उद्यान था। वहा जितशत्रु राजा राज्य करता था ॥ १२६ ॥

तत्थ णं वाणारसीए नयरीए चुलणीपिया नामं गाहावई परिवसइ अड्ढे जाव अपरिभूए। सामा भारिया। अट्ठ हिरणकोडीओ निहाण पउत्ताओ, अट्ठ वड्ढि पउत्ताओ, अट्ठ पवित्थर पउत्ताओ, अट्ठ वया दसगोसाहस्सिएणं वएणं। जहा आणन्दो राई-सर जाव सव्वकज्जवड्ढावए यावि होत्था। सामी समो-सढे। परिसा निग्गया। चुलणीपिया वि जहा आण-न्दो तहा निग्गओ। तहेव गिहिधम्मं पडिवज्जइ।

---

१ उत्क्षेप—"जइ ण, भन्ते, समणेण भगवया जाव सम्पत्तेण उवासगदसाण दोच्चस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, तच्चस्स ण, भन्ते, के अट्ठे पण्णत्ते"।

गोयम पुच्छा । तहेव सेस जहा कामदेवस्स जाव पोसहसालाए पोसहिए वम्भचारी समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिय धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताण विहरइ ॥ १२७ ॥

उस वनारस नगरमें चुलणीपिता गाथापति (सेठ) रहता था जो अतिधनवान् यावत् अपरिभूत (वडा) था । श्यामा नामा उसकी भार्या थी । अष्ट करोड स्वर्ण मुद्रा निधान प्रयुक्त, अष्ट वृद्धिप्रयुक्त, अष्ट प्रविस्तर प्रयुक्त और आठवर्ग, (दशसहस्र गौका एक वर्ग) उसके पास थे । आनन्दके समान राजेश्वरोका आधार यावत् सर्व कार्यकी उन्नतिका वह मुख्य कारण था । उस समय महावीर स्वामीजी पधारे, पुरष दर्शनार्थ गए । चुलणीपिता भी आनन्दके समान गया और उसी प्रकारही उसने गृहस्थ धर्मको स्वीकार किया । उसी प्रकार गौतमजीने प्रश्न किया । कामदेवके समान उसी प्रकारही ब्रह्मचारी चुलणीपिता यावत् पोषधशालामें पोषध और श्रमण भगवान् महावीरजीके पास गृहीत धर्मको पालता हुआ रहने लगा ॥ १२७ ॥

तए ण तस्स चुलणीपियस्स समणोवासयस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि एगे देवे अन्तियं पाउब्भूए १२८

तब उस चुलणीपिता श्रमणोपासकके पास अर्ध रात्रिके समय एक देवता प्रगट हुआ ॥ १२८ ॥

तए ण से देवे एग नीलुप्पल जाव असिं गहाय चुलणीपियं समणोवासय एवं वयासी। "हं भो चुलणीपिया समणोवासया जहा कामदेवो जाव न भञ्जसि, तो ते अहं अज्ज जेट्ठं पुत्तं साओ गिहाओ नीणेमि, २ त्ता तव अग्गओ घाएमि, २ त्ता तओ मंससोल्ले करेमि, २ त्ता आदाणभरियसि कडाहयंसि अद्दहेमि, २ त्ता तव गायं मसेण य सोणियेण य आयञ्चामि, जहा ण तुमं अट्टदुहट्टवसट्टे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविज्जसि" ॥ १२९ ॥

तब वह देवता एक नीलोत्पल यावत् तलवारको लेकर चुलणीपिता श्रमणोपासकको ऐसे बोला। हे चुलणीपिता श्रमणोपासक! (कामदेवके समान कहा) यदि तू यावत् शीलादिको भग न करेगा तो मैं आज तेरे ज्येष्ठ पुत्रको तेरे घरसे निकालूगा, ऐसा करके तेरे आगे उसको मारकर उसके मासके तीन खड करूगा, फिर आदाण (उदक तैलादि) से भरे हुये कटाह (लोहमय भाजन) में दहन करूगा, फिर मैं तेरे शरीरपर वह मांस और रुधिर सिञ्चन करूगा (छिड़-

गोयम पुच्छा । तहेव सेस जहा कामदेवस्स जाव पोसहसालाए पोसहिए बम्भचारी समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिय धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ ॥ १२७ ॥

उस बनारस नगरमें चुलणीपिता गाथापति (सेठ) रहता था जो अतिधनवान् यावत् अपरिभूत (बडा) था । श्यामा नामा उसकी भार्या थी । अष्ट करोड स्वर्ण मुद्रा निधान प्रयुक्त, अष्ट वृद्धिप्रयुक्त, अष्ट प्रविस्तर प्रयुक्त और आठवर्ग, (दशसहस्र गौका एक वर्ग) उसके पास थे । आनन्दके समान राजेश्वरोंका आधार यावत् सर्व कार्यकी उन्नतिका वह मुख्य कारण था । उस समय महावीर स्वामीजी पधारे, पुरुष दर्शनार्थ गए । चुलणीपिता भी आनन्दके समान गया और उसी प्रकारही उसने गृहस्थ धर्मको स्वीकार किया । उसी प्रकार गौतमजीने प्रश्न किया । कामदेवके समान उसी प्रकारही ब्रह्मचारी चुलणीपिता यावत् पोषधशालामें पोषध और श्रमण भगवान् महावीरजीके पास गृहीत धर्मको पालता हुआ रहने लगा ॥ १२७ ॥

तए ण तस्स चुलणीपियस्स समणोवासयस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि एगे देवे अन्तियं पाउब्भूए १२८

तन उस चुलणीपिता श्रमणोपासकके पास अर्ध रात्रिके समय एक देवता प्रगट हुआ ॥ १२८ ॥

तए णं से देवे एगं नीलुप्पल जाव असिं गहाय चुलणीपियं समणोवासयं एवं वयासी। "हं भो चुलणीपिया समणोवासया जहा कामदेवो जाव न भञ्जसि, तो ते अहं अज्ज जेट्ठं पुत्तं साओ गिहाओ नीणेमि, २ त्ता तव अग्गओ घाएमि, २ त्ता तओ मससोल्ले करेमि, २ त्ता आदाणभरियंसि कडाहयंसि अद्दहेमि, २ त्ता तव गायं मंसेण य सोणियेण य आयञ्चामि, जहा णं तुमं अट्टदुहट्टवसट्टे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविज्जसि" ॥ १२९ ॥

तन वह देवता एक नीलोत्पल यावत् तलवारको लेकर चुलणीपिता श्रमणोपासकको ऐसे बोला । हे चुलणीपिता श्रमणोपासक ! (कामदेवके समान कहा) यदि तू यावत् शीलादिको भंग न करेगा तो मैं आज तेरे ज्येष्ठ पुत्रको तेरे घरसे निकालूंगा, ऐसा करके तेरे आगे उसको मारकर उसके मासके तीन खंड करूंगा, फिर आदाण (उदक तैलादि) से भरे हुये कटाह (लोहमय भाजन) में दहन करूंगा, फिर मैं तेरे शरीरपर वह मास और रुधिर सिञ्चन करूंगा (छिड-

कूगा) जिससे तू आर्त और दुःखोंके वश होकर असमय मर जावेगा ॥ १२९ ॥

तए णं से चुलणीपिया समणोवासए तेणं देवेणं एवं वुत्ते समाणे अभीए जाव विहरइ ॥ १३० ॥

तब वह चुलणीपिता श्रमणोपासक उस देवतासे ऐसा कहा जानेपर भयरहित यावत् विचरता रहा ॥ १३० ॥

तएणं से देवे चुलणीपियं समणोवासयं अभीयं जाव पासइ, २ त्ता दोच्चं पि तच्चं पि चुलणीपियं समणोवासयं एवं वयासी। "हं भो चुलणीपिया समणोवासया, ' तं चेव भणइ, सो जाव विहरइ ॥१३१॥

तब वह देवता चुलणीपिता श्रमणोपासकको भयरहित (यावत्) देखकर दो तीनवार चुलणीपिता श्रमणोपासकको ऐसे बोला। "हे चुलणीपिता श्रमणोपासक!" (उसीप्रकारही कहा) परन्तु वह यावत् धर्ममें दृढ रहा ॥ १३१ ॥

तए णं से देवे चुलणीपियं समणोवासयं अभीयं जाव पासित्ता आसुरत्ते ४ चुलणीपियस्स समणोवासयस्स जेट्ठं पुत्तं गिहाओ नीणेइ, २ त्ता अग्गओ घाएइ, २ त्ता तओ मससोल्लए करेइ, २ त्ता आदाणभरियंसि कडाहयंसि अद्दहेइ, २ त्ता चुलणीपियस्स

समणोवासयस्स गायं मंसेण य सोणिएण य आय-
श्चइ ॥ १३२ ॥

तब उस देवताने चुलणीपिता श्रमणोपासकको भयरहित यावत् देखकर क्रोधमें चुलणीपिता श्रमणोपासकके ज्येष्ठ पुत्रको घरसे निकालकर उसके आगे मारकर उसके मासके तीन खण्ड करके, आदाणसे भरे हुये कटाहमें दग्ध किया और चुलणीपिता श्रमणोपासकके शरीरके ऊपर वह मास और रुधिर छिडका ॥ १३२ ॥

तए णं से चुलणीपिया समणोवासए तं उज्जलं जाव अहियासेइ ॥ १३३ ॥

तब उस चुलणीपिता श्रमणोपासकने उस अग्निमय यावत् वेदनाको श्रेष्ठरीतिसे सहन किया ॥ १३३ ॥

तए णं से देवे चुलणीपियं समणोवासयं अभीय जाव पासइ, २ त्ता दोच्च पि चुलणीपिय समणोवासयं एवं वयासी । "हं भो चुलणीपिया समणोवासया, अपत्थियपत्थिया जाव न भञ्जसि, तो ते अह अज्ज मज्झिम पुत्तं साओ गिहाओ नीणेमि २ त्ता तव अ-ग्गओ घाएमि," जहा जेट्ठं पुत्त तहेव भणइ, तहेव करेइ ॥ एवं तच्चंपि कणीयसं जाव अहियासेइ ॥१३४॥

तब वह देवता चुलणीपिता श्रमणोपासकको भयरहित यावत् देखकर दूसरीबार चुलणीपिता श्रमणोपासकको ऐसे बोला। हे चुलणीपिता श्रमणोपासक! कुपथ इच्छुक,! यदि तू शील यावत् भग न करेगा तो मैं आज तेरे मध्यम पुत्रको तेरे घरसे निकालकर, तेरे आगे उसका वध करूगा (आगे उसी प्रकारही कहा और किया जैसे ज्येष्ठ पुत्रके समय कहा और किया था)॥ ऐसे ही तृतीय बार कनीयस (छोटे) पुत्रके साथ वर्त्ताव किया यावत् चुलणीपिताने इन वेदनाओं को सहन किया॥ १२४॥

तएण से देवे चुलणीपिय समणोवासयं अभीय जाव पासइ, २त्ता चउत्थ पि चुलणीपिय समणोवासय एव वयासी। "ह भो चुलणीपिया समणोवासया, अपत्थियपत्थिया ४, जइ ण तुम जाव न भञ्जसि, तओ अह अज्ज जा इमा तव माया भद्दा सत्थवाही देवयगुरुजणणी दुक्कर दुक्कर कारिया, त ते साओ गिहाओ नीणेमि,२ त्ता तव अग्गओ घाएमि, २ त्ता तओ मससोल्लए करेमि, २ त्ता आदाणभरियसि कडाहयसि अद्दहेमि, २ त्ता तव गाय मसेण य सोणिएण या आयञ्चामि, जहा ण तुम अट्टदुहट्टवसट्टे

अकाले चेव जीवियाओ ववरोविज्जसि" ॥ १३५ ॥

तब वह देवता चुलणीपिता श्रमणोपासकको भयरहित यावत् देखकर चतुर्थवार चुलणीपिता श्रमणोपासकको ऐसे बोला। हे चुलणीपिता श्रमणोपासक! अप्रार्थित प्रार्थिक! यदि तू यावत् शीलादिको भग न करेगा तो मैं आज इस स्थानपर तेरी सार्थवाहिन्, देवगुरु समान जननी, दुष्कर कर्म करनेवाली माता भद्राको तेरे घरसे निकालकर तेरे आगे उसका वध करूगा, ऐसा करके उसके मासके तीन खण्ड करूगा, फिर आद्राणसे भरे हुये कटाहमें तप्त करके तेरे शरीरोपरि मास और रुधिर सिञ्चन करूगा जिससे तू आर्त और दु खोंके वश होकर असमय मर जावेगा ॥ १३५ ॥

तएणं से चुलणीपिया समणोवासए तेणं देवेणं एव वुत्ते समाणे अभीए जाव विहरइ ॥ १३६ ॥

तब वह चुलणीपिता श्रमणोपासक उस देवतासे ऐसा कहा जानेपर अभीत यावत् धर्ममें स्थिर रहा ॥ १३६ ॥

तएणं से देवे चुलणीपियं समणोवासय अभीयं जाव विहरमाणं पासइ, २ त्ता चुलणीपियं समणोवासय दोच्च पि तच्च पि एवं वयासी। "हं भो चुलणीपिया समणोवासया तहेव जाव ववरोविज्जसि"॥१३७॥

तब वह देवता चुलणीपिता श्रमणोपासकको भयरहित यावत् विचरता हुआ देखकर चुलणीपिता श्रमणोपासकको दो तीनवार ऐसे बोला। "हे चुलणीपिता श्रमणोपासक! (उसी प्रकार कहा) यावत् जीवनसे विमुक्त हो जावेगा" ॥ १३७ ॥

तएण तस्स चुलणीपियस्स समणोवासयस्स तेण देवेण दोच्च पि तच्च पि एव वुत्तस्स समाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए ५। "अहोण इमे पुरिसे अणारिए अणारियबुद्धी अणारियाइ पावाइ कम्माइ समायरइ, जेण मम जेट्ठ पुत्त साओ गिहाओ नीणेइ, २ त्ता मम अग्गओ घाएइ, २ त्ता जहा कय तहा चिन्तेइ जाव गाय आयश्चइ, जेणं मम मज्झिम पुत्त साओ गिहाओ जाव सोणिएण य आयश्चइ, जेण मम कणीयस पुत्त साओ गिहाओ तहेव जाव आयश्चइ, जा वि य ण इमा मम माया भद्दा सत्थवाही देवयगुरुजणणी दुक्कर दुक्कर कारिया, त पि य ण इच्छइ साओ गिहाओ नीणेत्ता मम अग्गओ घाएत्तए, त सेय खलु मम एय पुरिस गिण्हित्तए" त्ति कट्टु उट्ठाइए, से वि य आगासे उप्पइए, तेणं च खम्भे आसाइए, महया महया सद्देण कोलाहले कए॥१३८॥

तव इस देवतासे दोतीनवार इस प्रकार कहे जानेपर चुल-णीपिता श्रमणोपासकके मनमें अध्यास्थित सकल्प उत्पन्न हुआ। "अहो! आश्चर्य है यह अनार्य्य, अनार्य्य बुद्धिवाला पुरुप अनार्य पाप कर्म करता है जिसमें मेरे ज्येष्ठ पुत्रको मेरे घरसे निकाल-कर इसने मेरे आगे मारकर मासके तीन खण्ड करके आदाणसे पूरित कटाहमें उनको दग्ध करके, मास और रुधिरको मेरे ऊपर छिडका अत मेरे मध्यम पुत्रको भी मेरे गृहसे निकाल-कर यावत् रुधिरको सिञ्चन किया और मेरे कनीयस पुत्रको मेरे गृहसे निकालकर उसी प्रकार ही यावत् छिडका है अप-रंच अब मेरी सार्थवाहिन् देवगुरुसमान जननी, दुष्कर कर्म कर्त्री (मेरी रक्षा करनेवाली) माता भद्राको भी मेरे गृहसे निकालकर मेरे आगे वध करना चाहता है, इस लिये श्रेष्ठ हो यदि म इस पुरषको पकड़ूं,"। ऐसा विचार करके वह उठा, वह देवता आकाशमें भाग गया और उसके हाथमें स्तम्भ आगया (जिस कारण) उसने महा शब्दसे कोलाहल किया ॥ १३८॥

तएण सा भद्दा सत्थवाही त कोलाहल सद्दं सोच्चा निसम्म जेणेव चुलणीपिया समणोवासए तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता चुलणीपिय समणोवासयं एवं वयासी। "किण, पुत्ता, तुम महया महया सद्देण कोलाहले कए ?" ॥ १३९ ॥

तव सार्थवाहिनी माता भद्रा उस कोलाहल शब्दको सुनकर, जहा चुलणीपिता श्रमणोपासक था, वहा जाकर, चुलणीपिता श्रमणोपासकको ऐसे बोली । "हे पुत्र ! किस कारण तू ने महा शब्दसे कोलाहल किया है ?" ॥ १३६ ॥

तएण से चुलणीपिया समणोवासए अम्मयं भद्द सत्थवाहिं एव वयासी । "एवं खलु, अम्मो, न जाणामि, केवि पुरिसे आसुरत्ते ५ एग मह नीलुप्पल जाव असि गहाय मम एव वयासी, "" ह भो चुलणीपिया समणोवासया, अपत्थियपत्थिया ४ वजिया, जइ ण तुम जाव ववरोविज्जसि" " । अहं तेणं पुरिसेणं एवं वुत्ते समाणे अभीए जाव विहरामि। तएण से पुरिसे मम अभीय जाव विहरमाण पासइ, २ त्ता मम दोच्च पि तच्च पि एवं वयासी, "" ह भो चुलणीपिया समणोवासया, " " तहेव जाव गाय आयश्चइ । तएण अह त उज्जल जाव अहियासेमि । एव तहेव उच्चारेयव सव जाव कणीयस जाव आयञ्चइ। अहं त उज्जल जाव अहियासेमि । तएण से पुरिसे मम अभीय जाव पासइ, २ त्ता मम चउत्थं पि एव

वयासी, " "हं भो चुलणीपिया समणोवासया, अपत्थियपत्थिया, जाव न भञ्जसि तो ते अज्ज जा इमा माया गुरु जाव ववरोविज्जसि" " । तएणं अह तेणं पुरिसेण एवं वुत्ते समाणे अभीए जाव विहरामि । तएण से पुरिसे दोच्च पि तच्चंपि मम एवं वयासी, " "हं भो चुलणीपिया समणोवासया अज्ज जाव ववरोविज्जसि" " । तएणं तेण पुरिसेणं दोच्चं पि तच्चं पि ममं एव वुत्तस्स समाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए ५, " "अहोण इमे पुरिसे अणारिए जाव समायरइ, जेण मम जेट्ठ पुत्त साओ गिहाओ तहेव जाव कणीयस जाव आयञ्चइ, तुब्भे वि य णं इच्छइ साओ गिहाओ नीणेत्ता मम अग्गओ घाएत्तए, तं सेय खलु मम एय पुरिस गिण्हित्तए" " त्ति कट्टु उट्ठाइए से वि य आगासे उप्पइए, मए वि य खम्भे आसाइए, महया महया सद्देणं कोलाहले कए"॥१४०॥

तब वह चुलणीपिता श्रमणोपासक माता भद्रा सार्थवाहिनी को ऐसे बोला । "हे माता ! निश्चयसे मैं नहीं जानता कि कौन पुरुष क्रोधमें एक महान् नीलोत्पल तलवार को अ-

कनीयस पुत्रोंको तेरे घरसे नहीं निकाला और तेरे आगे वध किया, यह कोई पुरुष नहीं है जिसने तेरा उपसर्ग (दुःख) किया, यह तुझे विदर्शन दृष्टि पडा। अब तूने व्रत, नियम और पोषधको भग कर दिया है। इसकारण तू, हे पुत्र! इस स्थानकी आलोचना कर यावत् दण्ड ग्रहण कर" ॥ १४१ ॥

तए ण से चुलणीपिया समणोवासए अम्मगाए भद्दाए सत्थवाहीए "तह" त्ति एयमट्ठ विणएणं पडिसुणेइ, २ त्ता तस्स ठाणस्स आलोएइ जाव पडिवज्जइ ॥ १४२ ॥

तब उस चुलणीपिता श्रमणोपासकने सार्थवाहिनी माता भद्राकी ("तथास्तु" ऐसे वचन उच्चारण करके) इस बात को विनयसे सुनकर, उस स्थानकी आलोचनाकी यावत् दण्ड ग्रहण किया ॥ १४२ ॥

तए ण से चुलणीपिया समणोवासए पढम उवासगपडिम उवसम्पज्जित्ताण विहरइ। पढम उवासगपडिम अहासुत्त जहा आणन्दो जाव एक्कारस वि॥१४३॥

तब वह चुलणीपिता श्रमणोपासक उपासककी प्रथम प्रतिमा (प्रतिज्ञा) का सेवन करता हुआ विचरने लगा।

उपासककी प्रथम प्रतिज्ञाको आनन्दके समान यथासूत्र यावत् पालकर एकादशही प्रतिज्ञाओंको सेवन किया ॥१४३॥

तए णं से चुलणीपिया समणोवासए तेणं उरालेणं जहा कामदेवो जाव सोहम्मे कप्पे सोहम्मवर्डिंसगस्स महाविमाणस्स उत्तर पुरत्थिमेणं अरुणप्पभे विमाणे देवत्ताए उववन्ने। चत्तारि पीलओवमाइं ठिई पण्णत्ता। महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ५ ॥ १४४ ॥

तब वह चुलणीपिता श्रमणोपासक उस उदार तपकर्म के द्वारा कामदेवके समान धूमनिकी तरह सूक गया यावत् काल करके सौधर्म्म कल्पमें सौधर्म्म अवतसकके महाविमानके उत्तरपूर्वके मध्यकी दिशामें अरुणप्रभ विमानमें देवता उत्पन्न हुआ॥ वहा चार पल्योपमकी स्थिति कही है। (देवलोकसे आयु क्षय करके) महाविदेह क्षेत्रमें आगेसिद्ध होगा (५)॥१४४॥

॥ निक्खेवो ॥

(निक्षेप·)

सत्तमस्स अंगस्स उवासगदसाणं तइयं अज्झयणं समत्त ॥

सप्तमाङ्ग उपासकदशा का तृतीय अध्ययन समाप्त हुआ॥

वह देवता एक महान् नीलोत्पल यावत् तलवारको ग्रहण करके सुरादेव श्रमणोपासकको ऐसे बोला। "हे अप्रार्थित! प्रार्थिक! सुरादेव श्रमणोपासक! यदि तू शीलादिको यावत् भग न करेगा तो मैं तेरे ज्येष्ठ पुत्रको तेरे गृहमे, निकालकर तेरे आगे उसका वध करूगा अत उसके शरीरके पाच खण्ड करूगा। फिर थादाएसे पूरित कटाहमें दग्ध करके उसके रुधिर वा मासको तेरे शरीरपर छिड़कूगा, जिसकारण तू असमय जीवनसे विमुक्त हो जावेगा" ॥ पुन उसी प्रकार मध्यम और कनीयस पुत्रके सम्बन्धमें कहा और एक एक शरीरके पाच भाग करनेका विचार प्रगट किया पश्चात् उसी प्रकारही उनके साथ वर्त्ताव किया जैसा चुलणीपिताके पुत्रोंके साथ कियाथा इतना विशेष कि शरीरके पाच पाच भाग किये ॥ १४७ ॥

तए ण से देवे सुरादेव समणोवासय चउत्थ पि एव वयासी। "ह भो सुरादेवा समणोवासया अपत्थियपत्थिया ४ जाव न परिच्चयसि, तो ते अज्ज सरीरसि जमगसमगमेव सोलस रोगायङ्के पक्खिवामि, त जहा सासे कासे जाव कोढे, जहा ण तुम अट्टदुहट्ट जाव ववरोविज्जसि" ॥ १४८ ॥

तब वह देवता सुरादेव श्रमणोपासकको चतुर्थ वार ऐसे बोला। हे कुपथ इच्छक सुरादेव श्रमणोपासक! यदि तू यावत् शील का परित्याग नहीं करेगा तो मैं आज शीघ्र ही तेरे शरीरको १६ प्रकारके रोगोंसे पीडित करूगा यथा—१ श्वास २ काश (खासी) यावत् कोढ १६ जिसकारण आर्त और दु खोंके वश होकर तूं जीवनको त्याग देगा ॥ १४८ ॥

तए ण से सुरादेवे समणोवासए जाव विहरइ ॥ १४६ ॥

तब वह सुरादेव श्रमणोपासक उसी प्रकार यावत् धर्ममें दृढ रहा ॥ १४६ ॥

एव देवो दोच्च पि तच्च पि भणइ जाव "ववरोविज्जसि" ॥ १५० ॥

(पुन. उस देवताने उसी प्रकार दो तीन वार कहा जिसप्रकार ६५–६७ कहा था) यावत् जीवनसे विमुक्त हो जावेगा ॥ १५० ॥

तए ण तस्स सुरादेवस्स समणोवासयस्स तेणं देवेण दोच्च पि तच्च पि एव वुत्तस्स समाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए ४। "अहो ण इमे पुरिसे अणारिए जाव समायरइ, जेण मम जेट्ठ पुत्त जाव क-

श्रौर रुधिरको सिञ्चन नहीं किया है यह कोई पुरुष नहीं था जो तेरे शरीरको १६ प्रकारके रोगोंसे पीडित करनेकी इच्छा करता था, ऐसा किसी पुरुपने तेरा उपसर्ग नहीं किया है," (शेष उसी प्रकार चुलणीपिताके समान कहा) ॥ १५३ ॥

एव सेस जहा चुलणीपियस्स निरवसेस जाव सोहम्मे कप्पे अरुणकन्ते विमाणे उववन्ने । चत्तारि पलिओवमाइं ठिई । महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ५ ॥ १५४ ॥

तब वह सुरादेव श्रमणोपासक चुलणीपिताके समान एकादश ही प्रतिज्ञाओंको कायासे आराधन करके उदार तपकर्म के द्वारा शुष्क हो गया यावत् कालके अवसरपर मृत्यु प्राप्त करके सौधर्म्म कल्पमें अरुणकन्त विमानमें देवता उत्पन्न हुआ जहा चार पल्योपमकी स्थिति है (वहासे सुरादेव आयु क्षय करके) महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होगा ॥ १५४ ॥

॥ निक्खेवो ॥

(निक्षेप)

सत्तमस्स अङ्गस्स उवासगदसाए चउत्थ - यण समत्त ॥

सप्तमाङ्ग

पञ्चम अज्झयणं ।

(पचम अध्ययन ।)

॥ उक्खेवो पञ्चमस्स ॥

(पंचम अध्ययनका उत्क्षेप)

एवं खलु, जम्बू, तेणं कालेणं तेणं समएणं आलभिया नामं नयरी । सङ्खवणे उज्जाणे । जियसत्तू राया । चुल्लसयए गाहावई अड्ढे जाव छ हिरण्णकोडीओ जाव छ वया दसगोसाहस्सिएणं वएणं । बहुला भारिया । सामी समोसढे । जहा आणन्दो तहा गिहिधम्मं पडिवज्जइ । सेसं जहा कामदेवो जाव धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ ॥ १५५ ॥

(सुधर्म्मा स्वामीजी बोले) हे जम्बू! उसकाल, उससमय आलभिका नामा नगरी थी । उसमें शङ्खवन उद्यान था वहा जितशत्रु राजा अनुशासन भोगता था । उस नगरीमें अतुल्य ऋद्धियुक्त चुल्लशतक नामक गाथापति रहता था उसके पास ६ करोड स्वर्ण मुद्रा यावत् ६ वर्ग, (दश सहस्र गायका एक वर्ग) थे । उसकी बहुला नामा भार्या थी । स्वामीजी वहा पधारे । आनन्दके सदृश उसी प्रकार चुल्लशतकने गृहस्थधर्मको अङ्गीकार किया और शेष कामदेवके समान यावत् गृहीत धर्मको पालता हुआ रहने लगा ॥ १५५ ॥

तए ण तस्स चुल्लसयगस्स समणोवासयस्स पुव्वरत्तावरत्त कालसमयंसि एगे देवे अन्तियं जाव असिं गहाय एवं वयासी। "हं भो, चुल्लसयगा समणोवासया, जाव न भञ्जसि, तो ते अज्ज जेट्ठं पुत्त साओ गिहाओ नीणेमि," एवं जहा चुलणीपियं, नवरं एक्केक्के सत्त मससोल्लया, जाव कणीयसं जाव आयञ्चामि ॥ १५६ ॥

तब उस चुल्लशत्तक श्रमणोपासकके पास अर्धरात्रिके समय एक देवता यावत् तलवारको ग्रहण करके ऐसे बोला। हे चुल्लशत्तक श्रमणोपासक! यदि तू यावत् धर्म को भग न करेगा तो मैं आज तेरे ज्येष्ठ पुत्रको तेरे गृहसे निकालूंगा फिर उस को वध करके यावत् दग्ध करके मास और रुधिर तेरे शरीरपर छिडकूंगा (सर्व १२९—१३४ चूलणीपिताके समान कह सुनाया इतना विशेष कि यहा एक एक के सात भाग करनेका विचार प्रगट किया) यावत् कनीयस पुत्रको यावत् दग्ध करके मास और रुधिर सिञ्चन करूंगा ॥ १५६ ॥

तए ण से चुल्लसयए समणोवासए जाव विहरइ ॥ १५७ ॥

तब वह चुल्लशतक श्रमणोपासक यावत् उसी प्रकार धर्ममें स्थिर रहा ॥ १५७ ॥

तए णं से देवे चुल्लसयगं समणोवासयं चउत्थं पि एव वयासी। "हं भो चुल्लसयगा समणोवासया, जाव न भञ्जसि, तो ते अज्ज जाओ इमाओ छ हिरण्णकोडीओ निहाण पउत्ताओ, छ वड्ढि पउत्ताओ छ पविस्थर पउत्ताओ, ताओ साओ गिहाओ नीणेमि २ त्ता आलभियाए नयरीए सिङ्घाडग जाव पहेसु सव्वओ समन्ता विप्पइरामि, जहा णं तुमं अट्टदुहट्ट-वसट्टे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविज्जसि" ॥१५८॥

तब वह देवता चुल्लशतक श्रमणोपासकको ऐसे बोला। "हे चुल्लशतक श्रमणोपासक! यदि तू यावत् शीलादिको भग न करेगा तो मैं आज तेरी छ करोड स्वर्ण मुद्रा निधान प्रयुक्त, छ करोड स्वर्ण मुद्रा वृद्धि प्रयुक्त, और ६ करोड प्रविस्तर प्रयुक्त को तेरे गृहसे निकालूंगा, ऐसा करके आलभिका नगरीमें श्रृङ्गाटक यावत् पथोंपर सर्व धनको बिखेर दूगा, जिस कारण तू आर्त्त और दुःखोंके वश होकर अनुचित समयपर जीवन त्याग देगा" ॥ १५९ ॥

तए ण से चुल्लसयए समणोवासए तेणं देवेणं

एवं वुत्ते समाणे अभीए जाव विहरइ ॥ १५९ ॥

तब वह चुल्लशतक श्रमणोपासक उस देवतासे ऐसा कहे जानेपर अभीत यावत् धर्ममें स्थिर रहा ॥ १५९ ॥

तए ण से देवे चुल्लसयगं समणोवासय अभीय जाव पासित्ता दोच्च पि तच्च पि तहेव भणइ जाव "ववरोविज्जसि" ॥ १६० ॥

तब उस देवताने चुल्लशतक श्रमणोपासकको भयरहित यावत् देखकर दो तीनबार उसी प्रकार कहा यावत् "जीवन त्याग देगा" ॥ १६० ॥

तए ण तस्स चुल्लसयगस्स समणोवासयस्स तेण देवेण दोच्च पि तच्च पि एवं वुत्तस्स समाणस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए ४ । " अहो ण इमे पुरिसे अणारिए जहा चुलणीपिया तहा चिन्तेइ जाव कणीयस जाव आयञ्चइ, जाओ वि य ण इमाओ मम छ हिरण्णकोडीओ निहाणं पउत्ताओ छ वड्ढिपउत्ताओ छ पवित्थर पउत्ताओ, ताओ वि य ण इच्छइ मम साओ गिहाओ नीणेत्ता, आलभियाए नयरीए सिङ्घाडग जाव विप्पइरित्तए, तं सेय खलु मम एय

पुरिस गिरिगहत्तए" त्ति कट्टु उट्ठाइए। जहा सुरादेवो। तहेव भारिया पुच्छइ, तहेव कहेइ ॥ १६१ ॥

तब उस चुल्लशतक श्रमणोपासकको उस देवतासे दो तीन बार ऐसा कहे जानेपर इस स्वरूपमें अध्यास्थित सकल्प उत्पन्न हुआ। "अहो, इस अनार्य्य पुरुषने (चुलणीपिताके समान उसी प्रकार विचार किया) यावत् मेरे तीनों पुत्रोंके मास तथा रुधिरको मेरे शरीरपर सिञ्चन किया है और अब ६ करोड स्वर्ण मुद्रा निधान प्रयुक्त, ६ करोड वृद्धि प्रयुक्त, ६ करोड़ प्रविस्तर प्रयुक्त मेरे धनको मेरे गृहसे ले जाकर आलभिका नगरीमें शृङ्गाटक (—चतुष्पथ—चौराहा) यावत् पथोंपर बिखेरनेकी इच्छा करता है इस कारण श्रेष्ठ हो यदि मैं इस पुरुषको पकड़ू ऐसा विचार कर वह उठा। देवता आकाशमें चला गया और उसके हाथमें स्तम्भ आगया इस कारण उसने कोलाहल किया सुरादेवके समान भार्याके पूछनेपर चुल्लशतकने उसी तरह सर्व वार्त्ता कह सुनाई यावत् भार्याने दण्ड ग्रहण करने की शिक्षा दी ॥ १६१ ॥

सेसं जहा चुलणीपियस्स जाव सोहम्मे कप्पे अरुणसिट्ठे विमाणे उववन्ने। चत्तारि पलिओवमाइ ठिई। सेसं तहेव जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ॥ १६२ ॥

(शेष चुलणीपिताके समान १४२-१४४ यावत्) सौध र्म्मकल्पमें अरुणसिद्ध विमानमें (देवता) उत्पन्न हुआ। (जहां) चारपल्योपमकी स्थिति है। (शेष तथैव यावत्) महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होगा ॥ १६२ ॥

॥ निक्खेवो ॥

॥ निक्षेप. ॥

सत्तमस्स अगस्स उवासगदसाण पञ्चम अज्झयण समत्त ॥

सप्तम अङ्ग उपासकदशाका पञ्चम अध्ययन समाप्त हुआ ॥

छट्ठ अज्झयण ।

॥ षष्ठ अध्ययन ॥

॥ छट्ठस्स उक्खेवओ ॥

॥ षष्ठ अध्ययन का उत्क्षेप ॥

एव खलु, जम्बू, तेण कालेण तेण समएण कम्पिल्लपुरे नयरे। सहस्सम्बवणे उज्जाणे। जियसत्तू राया। कुण्डकोलिए गाहावई। पूसा भारिया। छ हिरण्णकोडीओ निहाणपउत्ताओ छ वड्ढिपउत्ताओ छ पवित्थर पउत्ताओ छ वया दसगोसाहस्सिएण वए·

णं । सामी समोसढे । जहा कामदेवो तहा सावयधम्मं पडिवज्जइ । सवेव वत्तव्वया जाव पडिलाभेमाणे विहरइ ॥ १६३ ॥

(सुधर्म्मास्वामीजी बोले) हे जम्बू ! उस काल, उस समय काम्पिल्यपुर एक नगर था । सहस्राम्रवन उद्यान था । वहा का जितशत्रु राजा था । और कुण्डकोलिक गाथापति रहता था । पुष्या नामा उसकी भार्या थी उसके पास ६ करोडस्वर्णमुद्रा निधानप्रयुक्त ६ वृद्धिप्रयुक्त, ६ प्रविस्तरप्रयुक्त और ६ वर्ग, (दशसहस्रगायका एक वर्ग) थे । स्वामीजी पधारे । कामदेवके सदृश् उसी प्रकार कुण्डको लिकने श्रावकधर्म्म को अगीकार किया । (शेपसर्व उसी प्रकार कहना चाहिये निर्ग्रन्थियोको अन्नपानादि प्रदान करताहुआ यावत्) अपना कल्याण करताहुआ रहने लगा ॥ १६३ ॥

तएणं से कुण्डकोलिए समणोवासए अन्नया कयाइ पुव्वावरण्हकालसमयसि जेणेव असोगवणिया, जेणेव पुढविसिलापट्टए, तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता नाममुद्दगं च उत्तरिज्जग च पुढविसिलापट्टए ठवेइ, २ त्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तियं धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ ॥ १६४ ॥

तब वह कुण्डकोलिक श्रमणोपासक अन्यदा समय मध्यान्ह (=दोपहर) समयमें, जहा अशोकवन था और जहा पृथ्वीशिलापट्टक था वहा जाकर नामाङ्कित मुद्रा और उत्तरीय (=दुपट्टा) को पृथ्वीशिलापट्टकपर रखकरके, श्रमण भगवान् महावीरजीके पास ग्रहण किये हुये धर्मको पालता हुआ रहने लगा ॥ १६४ ॥

तएण तस्स कुण्डकोलियस्स समणोवासयस्स एगे देवे अन्तिय पाउब्भवित्था ॥ १६५ ॥

तब उस कुण्डकोलिक श्रमणोपासक के पास एक देवता प्रकट हुआ ॥ १६५ ॥

तएण से देवे नाममुद्द च उत्तरिज्ज च पुढविसिलापट्टयाओ गेण्हइ, २ त्ता सखिङ्खिणि अन्तलिक्खपडिवन्ने कुण्डकोलिय समणोवासय एव वयासी । "ह भो कुण्डकोलिया समणोवासया, सुन्दरीण, देवाणुप्पिया, गोसालस्स मङ्खलिपुत्तस्स धम्मपण्णत्ती, नत्थि उट्ठाणे इ वा कम्मे इ वा बले इ वा वीरिए इ वा पुरिसक्कार परक्कमे इ वा नियया सव्वभावा, मगुलीए समणस्स भगवओ महावीरस्स धम्मपण्णत्ती,

अत्थि उट्ठाणे इ वा जाव परक्मे इ वा, अणियया सव्वभावा" ॥ १६६ ॥

तव उस देवताने पृथ्वीशिलापट्टकपरसे नामाङ्कितमुद्रा वा उत्तरीयको उठाकर, छोटी घण्टिकाकी ध्वनिके साथ आकाश में जाकर कुण्डकोलिक श्रमणोपासक को ऐसे कहा। हे कुण्डकोलिक श्रमणोपासक ! हे देवानुप्रिय ! गोशाल मङ्खलिपुत्रका धर्म परम सुन्दर है (जिसमें) उत्थान, कर्म, बल; वीर्य्य, पुरुषात्कार, पराक्रम नहीं है और सर्वभाव नियत हैं, श्रमण भगवान् महावीरजीका धर्म खोटा अर्थात् अहित है क्योंकि इसमें उत्थान, यावत् पराक्रम है, और सर्व भाव अनियत हैं" ॥ १६६ ॥

तएणं से कुण्डकोलिए समणोवासए तं देवं एवं वयासी। "जइ णं, देवा, सुन्दरी गोसालस्स मङ्खलिपुत्तस्स धम्मपण्णत्ती, नत्थि उट्ठाणे इ वा जाव नियया सव्वभावा, मङ्गुलीणं समणस्स भगवओ महावीरस्स धम्मपण्णत्ती, अत्थि उट्ठाणे इ वा जाव अणियया सव्वभावा। तुमे णं, देवा, इमा एयारूवा दिव्वा देविड्ढी, दिव्वा देवज्जुई, दिव्वे देवाणुभावे किणा लद्धे किणा पत्ते किणा अभिसमन्नागए, किं उट्ठा-

णेणं जाव पुरिसक्कारपरक्कमेण, उदाहु अणुट्ठाणेण अकम्मेण जाव अपुरिसक्कारपरक्कमेण" ? ॥ १६७ ॥

तब वह कुण्डकोलिक श्रमणोपासक उस देवताको ऐसे बोला। हे देव! यदि गोशाल मङ्खलिपुत्रका धर्म्म सुन्दर है और उसमें उत्थान नहीं है यावत् सर्वभाव नियत हैं और श्रमण भगवान् महावीरजीका धर्म अमङ्गलीक है अपरञ्च उसमें उत्थान है यावत् सर्वभाव अनियत हैं तो तुमने, हे देव! ऐसा स्वरूप दिव्य ऋद्धि, दिव्य द्युति, दिव्यदेवानुभाव किस प्रकारसे लब्ध प्राप्त वा सम्प्राप्त किये हैं, क्या यह पदार्थ उत्थान यावत् पुरुषाकार पराक्रम से प्राप्तकिये हैं या उलटा अनुष्ठान अकर्म यावत् अपुरुषाकार अबलसे प्राप्त किये हैं ?" ॥ १६७ ॥

तएणं से देवे कुण्डकोलियं समणोवासयं एवं वयासी । "एवं खलु, देवाणुप्पिया, मए इमेयारूवा दिव्वा देविड्ढी २ अणुट्ठाणेणं जाव अपुरिसक्कारपरक्कमेण लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया" ॥ १६८ ॥

तब वह देवता कुण्डकोलिक श्रमणोपासकको ऐसे बोला। " हे देवानुप्रिय! मैंने ऐसा स्वरूप दिव्य देवर्द्धि (इत्यादि) अनुष्ठानसे यावत् अपुरषात्कार और अबल से लब्ध प्राप्त अथवा सम्प्राप्त किये हैं" ॥ १६८ ॥

तएणं से कुण्डकोलिए समणोवासए तं देवं एवं वयासी। "जइणं, देवा, तुमे इमा एयारूवा दिव्वा देविड्ढी ३ अणुट्ठाणेणं जाव अपुरिसक्कारपरक्कमेणं लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया, जेसि णं जीवाणं नत्थि उट्ठाणे इ वा जाव परक्कमे इ वा, ते किं न देवा ?। अहणं, देवा, तुमे इमा एयारूवा दिव्वा देविड्ढी ३ उट्ठाणेणं जाव परक्कमेण लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया। तो ज वदसि सुन्दरीण गोसालस्स मङ्खलिपुत्तस्स धम्मपणत्ती, नत्थि उट्ठाणे इ वा जाव नियया सव्वभावा, मङ्गुलीणं समणस्स भगवओ महावीरस्स धम्मपणत्ती, अत्थि उट्ठाणे इ वा जाव अणियया सव्वभावा, तं ते मिच्छा" ॥ १६९ ॥

तव नह कुण्डकोलिक श्रमणोपासक उस देवताको ऐसे बोला। "हे देव ! यदि तुमने यह ऐसा स्वरूप दिव्य देवऋद्धि (इत्यादि) अनुष्ठान यावत् अपुरुषात्कार, अबलसे प्राप्त लब्ध वा सम्प्राप्त की है, तो जिन जीवोंमें उत्थान यावत् पराक्रम (शक्तिया) नहीं है। तो वह देवता क्यू नहीं बने हैं ?। इसकारण, हे देव ! तूने ऐसा स्वरूप, दिव्य देवेर्द्धि इत्यादि उत्थान (यावत्) पराक्रमसेही लब्ध प्राप्त अथवा सम्प्राप्त

किये हैं। इसलिये जो तू कहता है कि गोशाल मङ्खलिपुत्रका धर्म सुन्दर है जिसमें उत्थान नहीं है यावत् सर्वभाव नियत हैं, और श्रमण भगवान् महावीरजीका धर्म्म अर्थात् उपदेश हानिकारक है और उसमें उत्थान है यावत् सर्व भाव अनियत हैं, यह तेरा ऐसा कथन मिथ्या है" ॥ १६९ ॥

तए णं से देवे कुण्डकोलिएणं समणोवासएणं एवं वुत्ते समाणे सङ्किए जाव कलुससमावन्ने नो सचाएइ कुण्डकोलियस्स समणोवासयस्स किंचि पामोक्खमाइक्खित्तए, नाममुद्दयं च उत्तरिज्जयं च पुढविसिलापट्टए ठवेइ, २ त्ता जामेव दिसं पाउब्भूए, तामेव दिसं पडिगए ॥ १७० ॥

तब उस देवताने कुण्डकोलिक श्रमणोपासकसे इसप्रकार कहे जानेपर शङ्कित होकर (यावत्) पीडित होकर और कुण्डकोलिक श्रमणोपासककी युक्तियोंका खण्डन करनेके अपने आपको असमर्थ जानकर, नाममुद्रा और उत्तरीयको पृथ्वीशिलापट्टकपर रखदिया, ऐसा करके वह जिस दिशासे प्रकट हुआ था उस दिशाको चला गया ॥ १७० ॥

ते णं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे ॥१७१॥

उस काल, उस समय स्वामी जी काम्पिल्यपुरमें पधारे ॥ १७१ ॥

तएण से कुण्डकोलिए समणोवासए इमीसे कहाए लद्धट्ठे हट्ठ जहा कामदेवो तहा निग्गच्छइ जाव पज्जुवासइ । धम्मकहा ॥ १७२ ॥

तब वह कुण्डकोलिक श्रमणोपासक यह समाचार पाकर मनमें बडा प्रसन्न वा सन्तुष्ट हुआ और कामदेवके समान उसी प्रकार दर्शनार्थ गया यावत् सेवाभक्ति की । और धर्म्मकथा श्रवण की ॥ १७२ ॥

" कुण्डकोलिया " इ समणे भगवं महावीरे कुण्डकोलिय समणोवासय एवं वयासी । "से नूणं, कुण्डकोलिया, कल्ल तुब्भ पुवावरण्हकाल समयंसि असोगवणियाए एगे देवे अन्तिय पाउब्भवित्था । तएण से देवे नाममुद्दं च तहेव जाव पडिगए । से नूण, कुण्डकोलिया, अट्ठे समट्ठे" ? ।

" हन्ता, अत्थि " ।

" तं धन्ने सि ण तुमं, कुण्डकोलिया," जहा कामदेवो ॥ १७३ ॥

(कुण्डकोलिक की तरफ दृष्टिकरके) श्रमण भगवान् महावीरजी कुण्डकोलिक श्रमणोपासकको ऐसे बोले । हे कुण्ड-कोलिक ! " क्या कल्ल तेरे पास मध्यान्हसमय कोई देवता

अशोकवनमें प्रगट हुआ था। तब वह देवता नामाङ्कितमुद्रा और उत्तरीयको उठाकर बोला (तथैव १६६—१७० तक कहा) यावत् चला गया। हे कुण्डकोलिक! क्या यह बात सत्य है?"

(कुण्डकोलिकने उत्तर दिया) "महाराज! सत्य है"

(महावीरजी बोले) हे कुण्डकोलिक! "तुम धन्य हो," (कामदेवके समान सब कहा) ॥ १७३ ॥

"अज्जो" इ समणे भगव महावीरे समणे निग्गन्थे य निग्गन्थीओ य आमन्तित्ता एव वयासी। "जइ ताव, अज्जो, गिहिणो गिहिमज्झा वसन्ताण अन्नउत्थिए अट्ठेहि य हेऊहि य पसिणेहि य कारणेहि य वागरणेहि य निप्पट्ठपसिणवागरणे करेन्ति, सक्का पुणाइ, अज्जो, समणेहि निग्गन्थेहि दुवालसङ्ग गणिपिडग अहिज्जमाणेहि अन्नउत्थिया अट्ठेहि य जाव निप्पट्ठपसिणा करित्तए ॥ १७४ ॥

श्रमण भगवान् महावीरजी साधु वा साध्वियोंको आमन्त्रित करके ऐसे बोले। "हे आर्य्यपुरुषो! यदि गृहके मध्यमें रहते हुये गृहस्थी पुरुष अन्य यूथिकको अर्थ, हेतु, प्रश्न, कारण वा व्याकरणसे निरुत्तर कर देते हैं, तो फिर, हे आर्य्यमहाशयो! श्रमणो, निर्ग्रन्थियों वा द्वादशाङ्गके पाठियोंको

अवश्यमेव अन्ययूथिकको अर्थसे यावत् निरुत्तर करदेना उचित है ॥ १७४ ॥

तएगा समणा निग्गन्था य निग्गन्थीओ य समणस्स भगवओ महावीरस्स "तह" त्ति एयमट्ठं विणएण पडिसुणेन्ति ॥ १७५ ॥

तब श्रमण, नैर्ग्रन्थ वा साध्वियोंने श्रमण भगवान् महावीरजी की "तथास्तु" ऐसा वचन उच्चारणकरके इस वार्त्ताको विनय से श्रवण किया ॥ १७५ ॥

तएणं से कुराडकोलिए समणोवासए समणं भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ, २ त्ता पसिणाइं पुच्छइ, २ त्ता अट्ठमादियइ, २ त्ता जामेव दिसं पाउब्भूए, तामेव दिसं पडिगए ॥ १७६ ॥

तब वह कुण्डकोलिक श्रमणोपासक श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके, प्रश्न पूछकर और उत्तर ग्रहण करके जिस दिशासे प्रकट हुआ था, उसी दिशाको चला गया ॥ १७६ ॥

सामी बहिया जणवयविहारं विहरइ ॥ १७७ ॥

तब स्वामीजी बाहर अन्यदेशको विहार करगये ॥ १७७ ॥

आजीवियसमए अट्ठे अय परमट्ठे सेसे अणट्ठे" त्ति आजीवियसमएणं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥१८१॥

उस पोलासपुर नगरमें शब्दालपुत्र नामक कुंभकार (कुम्हार) गोशालाजीके मतका उपासक बसता था जिसने आजीविकामतके सिद्धान्तके अर्थ लब्ध किये थे और ग्रहण किये थे पूछ २ कर निर्णय किये थे और अर्थ उसके अवगत थे उसकी अस्थि और मिंजिया प्रेमराग मे रगी हुई थीं और वह सदाकाल आजीविकामतको परमार्थ समझता हुआ शेष कार्योंको अनर्थ रूप मानता था और गोशालाजीके सिद्धान्तको अगीकार करता हुआ विचरता था ॥ १८१ ॥

तस्स णं सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासगस्स एक्का हिरणकोडी निहाणपउत्ता एक्का वढ्ढिपउत्ता एक्का पवित्थरपउत्ता एक्के वए दसगोसाहस्सिएणं वएणं ॥ १८२ ॥

उस शब्दालपुत्र आजीविकोपासक के पास एक करोड स्वर्णमुद्रा निधानप्रयुक्त, एक करोड वृद्धिप्रयुक्त, एक करोड प्रविस्तर प्रयुक्त और दशसहस्र गोका एक वर्ग था ॥ १८२ ॥

तस्स णं सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासगस्स अग्गिमित्ता नामं भारिया होत्था ॥ १८३ ॥

"(भगवानुवाच) हे शब्दालपुत्र! निश्चित उस देवताने गोशालमङ्खलिपुत्रके सम्बन्धमें ऐसा नहीं कहा था" ॥ १९२ ॥

तएण तस्स सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासयस्स समणेण भगवया महावीरेण एवं वुत्तस्स समाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए ४। "एस णं समणे भगव महावीरे महामाहणे उप्पन्नणाणदसणधरे जाव तच्च कम्मसम्पया सम्पउत्ते। त सेय खलु मम समण भगव महावीर वन्दित्ता नमसित्ता पाडिहारिएण पीढ फलग जाव उवनिमन्तित्तए" एवं सम्पेहेइ, २ त्ता उट्ठाए उट्ठेइ, २ त्ता समण भगव महावीर वन्दइ नमसइ, २ त्ता एव वयसी। "एव खलु, भन्ते, मम पोलासपुरस्स नयरस्स बहिया पञ्च कुम्भकारावणसया। तत्थण तुब्भे पाडिहारिय पीढ जाव सथारय ओगिण्हित्ताण विहरइ' ॥ १९३ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजीसे ऐसा कहे जानेपर उस शब्दालपुत्र आजीविकोपासकके मनमें इस स्वरूपमें अध्यास्थित सकल्प उत्पन्न हुआ। "यह श्रमण भगवान् महावीरजी महादयावान्, ज्ञानदर्शनधारक यावत् तथ्य कर्म सम्पत्तिसे युक्त है। इसकारण श्रेष्ठ हो यदि मैं श्रमण भगवान्

महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके दयाभावसे आसन, फलक यावत् सस्तारकके लिये आमत्रण दू"। ऐसा विचार कर वह उठा और श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके ऐसे बोला । हे भगवन्! पोलासपुर नगरके बाहिर मेरे कुम्भकारो की पाच निर्माणशालायें हैं। इसलिये आप कृपा करके आसन यावत् सस्तारक ग्रहण करके वहा ही ठहरें" ॥ १९३ ॥

तए णं समणे भगव महावीरे सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासगस्स एयमट्ठ पडिसुणेइ, २ त्ता सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासगस्स पञ्चकुम्भकारावणसएसु फासुएसणिज्ज पाडिहारिय पीढफलग जाव संथारयं ओगिरिहत्ताणं विहरइ ॥ १९४ ॥

तब श्रवण भगवान् महावीरजी शब्दालपुत्र आजीविकोपासककी इस बातको स्वीकार करके शब्दालपुत्र आजीविकोपासककी पाच विरचनशालाओंमें प्राशुक, एषणीय तथा प्रातिहारिक आसन, फलक यावत् सस्तारकको ग्रहण करके वहाही ठहर गये ॥ १९४ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते आजीविओवासए अन्नया कयाइ वायाहययं कोलालभण्डं अन्तो सालाहिन्तो वहिया नीणेइ, २ त्ता आयवसि दलयइ ॥ १९५ ॥

तए णं समणे भगव महावीरे सद्दालपुत्त आजीविओवासय एव वयासी । "सद्दालपुत्ता, जइ ण तुब्भ केइ पुरिसे वायाहय वा पक्केल्लय वा कोलालभण्डं अवहरेज्जा वा विक्खिरेज्जा वा भिन्देज्जा वा अच्छिन्देज्जा वा परिट्ठवेज्जा वा अग्गिमित्ताए वा भारियाए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइ भुञ्जमाणे विहरेज्जा, तस्स णं तुम पुरिसस्स किं दण्डं वत्तेज्जासि ?" ॥ "भन्ते, अह ण त पुरिसं आओसेज्जा वा हणेज्जा वा वन्धेज्जा वा महेज्जा वा तज्जेज्जा वा तालेज्जा वा निच्छोडेज्जा वा निब्भच्छेज्जा वा अकाले चेव जीवियाओ ववरोवेज्जा' ॥ "सद्दालपुत्ता, नो खलु तुब्भ केइ पुरिसे वायाहय वा पक्केल्लय वा कोलालभण्डं अवहरइ वा जाव परिट्ठवेइ वा अग्गिमित्ताए वा भारियाए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुञ्जमाणे विहरइ । नो वा तुम त पुरिसं आओसेज्जसि वा हणेज्जसि वा जाव अकाले चेव जीवियाओ ववरोवेज्जसि । जइ नत्थि उट्ठाणे इ वा जाव परक्कमे इ वा, नियया सव्वभावा । अह ण, तुब्भ केइ पुरिसे

वायाहय जाव परिट्ठवेइ वा अग्गिमित्ताए वा जाव विहरइ, तुमं वा तं पुरिसं आओसेसि वा जाव ववरोवेसि। तो जं वदसि, नत्थि उट्ठाणे इ वा जाव नियया सव्वभावा, तं ते मिच्छा' ॥ २०० ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजी शब्दालपुत्र आजीविकोपासकको ऐसे बोले। "हे शब्दालपुत्र! यदि कोई मनुष्य तेरे वाताहत और पके हुए भाजनोंको चुरा ले, खण्डित, विक्षिप्त अथवा छिद्रित कर दे या बाहिर निकालकर अरक्षित कर दे और तेरी अग्निमित्राभार्याके साथ विपुल भोग भोगे, तो तू उसको क्या दण्ड देगा?" ॥ (शब्दालपुत्रने उत्तर दिया) "हे भगवन्! मैं उस पुरुषको शाप दूंगा, दण्ड (डंडा) आदिसे मारूंगा, तिरस्कार करूंगा तथा चपेटादिसे ताडन करूंगा अथवा उसका धन छीन लूंगा वा उसको परुष वचनोंसे झिड़कूंगा (इसके अतिरिक्त) असमय उसको जीवनसे विमुक्त करदूंगा ॥ (भगवान् बोले) "हे शब्दालपुत्र! कोई भी पुरुष तेरे वाताहत वा पक्व भाजनोंको ना ही चुराता है यावत् ना ही अरक्षित करता है और ना ही अग्निमित्राके साथ विपुल भोग भोगता है और तू भी उसको ना ही शाप देता है, ना ही मारता है यावत् ना ही जीवनसे विमुक्त करता है यदि उत्थान यावत् पराक्रम नहीं है और

सर्व भाव नियत हैं। मैं निश्चयसे कहता हू कि यदि कोई पुरुष तेरे वाताहत यावत् भाजनोको अरक्षित करता है वा अग्निमित्राके साथ विपुल भोग भोगता हुआ विचरता है और तू भी उसको अभिशाप देता है यावत् जीवनसे विमुक्त करता है तो जो तू कहता है कि उत्थान कुछ पदार्थ नहीं है यावत् सर्व भाव नियत हैं, यह तेरा कथन मिथ्या अर्थात् असत्य है" ॥ २०० ॥

एत्थ णं से सद्दालपुत्ते आजीविओवासए सम्बुद्धे ॥ २०१ ॥

यह वचन सुनकर उस शब्दालपुत्र आजीविकोपासकको सम्यक् ज्ञान प्राप्त हुआ ॥ २०१ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते आजीविओवासए समणं भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ, २ त्ता एव वयासी। "इच्छामि णं, भन्ते, तुब्भं अन्तिए धम्मं निसामेत्तए" ॥ २०२ ॥

तब वह शब्दालपुत्र आजीविकोपासक श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके ऐसे बोला । "हे भगवन् ! । मैं आपके पास धर्म श्रवण करनेकी इच्छा करता हू" ॥ २०२ ॥

तए ण समणे भगवं महावीरे सद्दालपुत्तस्स आजीविओवासगस्स तीसे य जाव धम्मं परिकहेइ ॥ २०३ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजीने शब्दालपुत्र आजीविकोपासकको यावत् धर्मोपदेश दिया ॥ २०३ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते आजीविओवासए समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठ तुट्ठ जाव हियए जहा आणन्दो तहा गिहिधम्मं पडिवज्जइ । नवरं एगा हिरण्णकोडी निहाणपउत्ता एगा हिरण्णकोडी वड्ढिपउत्ता एगा हिरण्णकोडी पवित्थरपउत्ता एगे वए दसगोसाहस्सिएणं वएणं जाव समण भगव महावीरं वन्दइ नमंसइ, २ त्ता जेणेव पोलासपुरे नयरे तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता पोलासपुर नयर मज्झं मज्झेणं जेणेव सए गिहे जेणेव अग्गिमित्ता भारिया तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता अग्गिमित्तं भारिय एवं वयासी । "एवं, खलु, देवाणुप्पिए, समणे भगवं महावीरे जाव समोसढे, तं गच्छाहि णं तुमं, समण भगवं महावीरं

वन्दाहि जाव पज्जुवासाहि, समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए पञ्चाणुवइय सत्तसिक्खावइयं दुवालसविह गिहिधम्म पडिवज्जाहि" ॥ २०४ ॥

तब वह शब्दालपुत्र आजीविकोपासक श्रमण भगवान् महावीरजीके पाससे धर्म्म सुनकर यावत् हृदयमें अति प्रसन्न हुआ। और उसने उसी प्रकारही आनन्दके समान गृहस्थ-धर्मको अगीकार किया ॥ और एक करोड स्वर्णमुद्रा निधानप्रयुक्त, एक करोड स्वर्णमुद्रा वृद्धिप्रयुक्त, एक करोड प्रविस्तरप्रयुक्त और दशसहस्र गौके एक वर्गका आगार रखा यावत् श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके पोलासपुर नगरमें गया, वहा जाकर पोलासपुर नगरके मध्यसे चलकर जहा स्वगृह और अग्निमित्रा भार्याथी वहा पहुचकर अग्निमित्रा भार्याको ऐसे बोला। "हे देवानुप्रिये! निश्चयसे श्रमण भगवान् महावीर जी यावत् यहा पधारे हैं, इसकारण तू जा और श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार कर, यावत् सेवाभक्ति कर, और श्रमण भगवान् महावीरजीके पास पाच अणुव्रत सात शिक्षाव्रत युक्त द्वादशविधके गृहस्थ धर्मको अगीकार कर" ॥ २०८ ॥

तए ण सा अग्गिमित्ता भारिया सद्दालपुत्तस्स

समणोवासगस्स "तह" त्ति एयमट्ठं विणएण पडि-सुणेइ ॥ २०५ ॥

तब उस अग्निमित्रा भार्याने शब्दालपुत्र आजीविकोपासकके ("तथास्तु" ऐसा कहके) इस अर्थको विनयसे श्रवण किया ॥ २०५ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते समणोवासए कोडुम्बिय-पुरिसे सद्दावेइ, २ त्ता एवं वयासी । "खिप्पामेव, भो देवाणुप्पिया, लहुकरणजुत्तजोइयं समखुरवालिहाणसमलिहियसिङ्गएहिं जम्बूणयामयकलाव जोत्तपडविसिट्ठएहिं रययामयघण्टसुत्तरज्जुगवरकञ्चणखइय नत्थापग्गहोग्गहियएहिं नीलुप्पलकया मेलएहिं पवरगोणजुवाणएहिं नाणामणिकणगघण्टियाजालपरिगय सुजायजुगजुत्तउज्जुगपसत्थसुविरइयनिम्मियं पवरलक्खणोववेयं जुत्तामेव धम्मियं जाणप्पवरं उवट्ठवेह, २ त्ता मम एयमाणत्तिय पच्चप्पिणह ॥ २०६ ॥

तत्पश्चात् शब्दालपुत्र श्रमणोपासक कौटुम्बिक सेवकको बुलाकर ऐसे बोला । हे देवानुप्रिय! सम (बराबर) खुर और पूछवाले तथा सम शृंगवाले, जाम्बूनद रत्नमय ग्रीवा-

भरण (गलेका भूपण) से अलकृत तथा कठरज्जूमे सुशोभित, रजतमय घण्टिकासे तथा सुवर्णवद्ध कार्पासिक सूत्रमय नस्त वा नासारज्जुसे सुशोभित तथा नीलोत्पल (नीला कमल) कृत शेखर (कलगी) से युक्त (ऐसे) दो प्रधान वृषभों (बैलो) को दत्त पुरुपोंके बनाये हुये नाना प्रकारके रत्नो वा घण्टों के जालसे परिवेष्टित, सरल सुघटित वा सुनिर्मित काष्ठमय सुजात रथमें सम्बद्ध करके प्रवर लक्षणोपेत धार्मिक रथको मुझे शीघ्र अर्पण करो ॥ २०६ ॥

तए ण ते कोडुम्बियपुरिसा जाव पच्चप्पिण न्ति ॥ २०७ ॥

तब कौटुम्बिक सेवकोंने यावत् रथको प्रत्यर्पण किया ॥२०७॥

तए ण सा अग्गिमित्ता भारिया रहाया जाव पायच्छित्ता सुद्धप्पावेसाइ जाव अप्पमहग्घाभरणालङ्कियसरीरा चेडिया चक्कवाल परिकिण्णा धम्मिय जाणप्पवर दुरुहइ, २ त्ता पोलासपुर नगर मज्झ मज्झेण निग्गच्छइ, २ त्ता जेणेव सहस्सम्बवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता धम्मियाओ जा णाओ पच्चोरुहइ, २ त्ता चेडियाचक्कवालपरिवुडा जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ, २

त्ता तिक्खुत्तो जाव वन्दइ नमंसइ, २ त्ता नच्चासन्ने नाइदूरे जाव पञ्जलिउडा ठिइया चेव पज्जुवासइ ॥२०८

तब वह अग्निमित्रा भार्या स्नान यावत् प्रायश्चित्त करके शुद्ध वस्त्र यावत् अल्प भारवाले, बहुमूल्य आभरण शरीर पर अलंकृत करके चक्रके समान दासी आदिसे घिरी हुई धार्मिक रथपर चढकर पोलासपुर नगरके मध्यसे जाकर जहा सहस्राम्रवन था वहा गई और धार्मिक शकटसे उतर-कर, सर्व दासी आदिसहित जहा श्रमण भगवान् महावी-रजी विराजमान थे वहा जाकर तीन वार यावत् वन्दना नमस्कार हस्त जोडकर, ना ही अति निकट और ना ही अति दूर खडे होकर उसने सेवा भक्ति की ॥ २०८ ॥

तए ण समणे भगवं महावीरे अग्गिमित्ताए तीसे य जाव धम्म केहइ ॥ २०९ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजीने अग्निमित्राको तथा उसकी सखियोंको यावत् धर्मोपदेश दिया ॥ २०९ ॥

तए ण सा अग्गिमित्ता भारिया समणस्स भग-वओ महावीरस्स अन्तिए धम्म सोच्चा निसम्म ह-ट्ठतुट्ठा समण भगव महावीरं वन्दइ नमसइ, २ त्ता एवं वयासी । "सद्दहामि ण, भन्ते, निग्गन्थं पाव-

यणं जाव से जहेयं तुब्भे वयह । जहा ण देवाणु-
प्पियाण अन्तिए बहवे उग्गा भोगा जाव पव्वइया,
नो खलु अहं तहा सचाएमि देवाणुप्पियाण अन्तिए
मुण्डा भवित्ता जाव । अहण देवाणुप्पियाण अ-
न्तिए पञ्चाणुव्वइय सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं
गिहिधम्म पडिवज्जिस्सामि । अहासुह, देवाणुप्पिया,
मा पडिबन्ध करेह" ॥ २१० ॥

तब वह अग्निमित्रा भार्या श्रमण भगवान् महावीरजीके
पास धर्म्म सुनकर और प्रसन्न होकर श्रमण भगवान् महा-
वीरजीको वन्दना नमस्कार करके ऐसे बोली ॥ "हे भगवन्!
मैं जिन वचनोंमें श्रद्धा करती हू यावत् जो आपने प्रतिपा
दन किया है वह नितात सत्य है । यद्यपि आपके पास
बहुत क्षत्रिय अथवा पूज्य यावत् दीक्षा ग्रहण करते हैं,
तदपि मैं देवानुप्रियके (आपके) पास मुण्डित होनेको
यावत् समर्थ नहीं हू । इसलिये मैं आपके पास पाच अणुव्रत
सात शिक्षाव्रत युक्त द्वादशविधके गृहस्थ धर्मकोही अगीकार
करूगी । (भगवान्ने उत्तर दिया) हे देवानुप्रिय! जैसे
तुम्हें सुख हो वैसे ही करो किन्तु इस काममें कोई निरोध
(रोक) मत करो ॥ २१० ॥

तए णं सा अग्गिमित्ता भारिया समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिए पञ्चाणुवइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं सावगधम्मं पडिवज्जइ, २ त्ता समणं भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ, २ त्ता तामेव धम्मियं जाणप्पवरं दुरुहइ, २ त्ता जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया ॥ २११ ॥

तब वह अग्निमित्रा भार्या श्रमण भगवान् महावीरजीके पास पाच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत युक्त द्वादश प्रकारके श्रावक धर्मको अंगीकार करके, और श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके, उसी धार्मिक यानमें (रथमें) चढ कर जिस दिशासे प्रगट हुई थी उसी दिशाको चली गई ॥ २११ ॥

तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ पोलासपुराओ सहस्सम्बवणाओ पडिनिग्गच्छइ, २ त्ता वहिया जणवयविहारं विहरइ ॥ २१२ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजी अन्यदा समय पोलासपुर और सहस्राम्रवनको छोडकर किसी अन्य विहारको गमन कर गये ॥ २१२ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते समणोवासए जाए अभिगय जीवाजीवे जाव विहरइ ॥ २१३ ॥

तब जीव अजीवको जाननेहारा वह शब्दालपुत्र श्रमणोपासक मुनियोंको प्राशुक, एषणीय अन्न पान तथा वस्त्रादि प्रदान करता हुआ यावत् विचरने लगा ॥ २१३ ॥

तए णं से गोसाले मङ्खलिपुत्ते इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे, "एवं खलु सद्दालपुत्ते आजीवियसमयं वमित्ता समणाणं निग्गन्थाणं दिट्ठिं पडिवन्ने, तं गच्छामि णं सद्दालपुत्तं आजीविओवासयं समणाणं निग्गन्थाणं दिट्ठिं वामेत्ता पुणरवि आजीवियदिट्ठिं गेण्हावित्तए" त्ति कट्टु एवं सम्पेहेइ, २ त्ता आजीवियसङ्घसम्परिवुडे जेणेव पोलासपुरे नयरे जेणेव आजीवियसभा तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता आजीवियसभाए भण्डगनिक्खेवं करेइ, २ त्ता कइवएहिं आजीविएहिं सद्धिं जेणेव सद्दालपुत्ते समणोवासए तेणेव उवागच्छइ ॥ २१४ ॥

तत्पश्चात् इस जनश्रुतिको सुनकर (कि शब्दालपुत्र श्रमण भगवान् महावीरजी का उपासक होगया है) गोशालमङ्खलिपुत्रने विचार किया, "निश्चयसे शब्दालपुत्रने आजी-

त्रिक मतको छोडकर, श्रमण और निर्ग्रन्थिके उपदेशको ग्रहण किया है इसलिये मैं जाता हू और शब्दालपुत्र आजीविकोपासकको श्रमण और निर्ग्रन्थिके धर्मसे विमुख करके फिर आजीविक मतमें प्रविष्ट करता हू" ऐसे विचार कर आजीविक परिवारसहित पोलासपुर नगरमें जहा आजीविक-समास्थान था, वहा जाकर आजीविक सभामें पात्रादिको स्थापन करके कितनेक आजीविकोंके साथ जहा शब्दालपुत्र श्रमणोपासक था वहा गया ॥ २१४ ॥

तए गा से सद्दालपुत्ते समणोवासए गोसालं मङ्खलिपुत्त एज्जमाण पासइ, २ त्ता नो आढाइ नो परिजाणइ, अणाढामाणे अपरिजाणमाणे तुसिणीए संचिट्ठइ ॥ २१५ ॥

तब गोशाल मङ्खलिपुत्रको आया हुआ देखकर उस शब्दालपुत्र श्रमणोपासकने ना तो उसको नमस्कार किया और ना ही उसका आदर वा सत्कार किया किन्तु (विना नमस्कार वा सन्मान किये ही) मौन रहा ॥ २१५ ॥

तए गा से गोसाले मंखलिपुत्ते सद्दालपुत्तेण समणोवासएण अणाढाइज्जमाणे अपरिजाणिज्जमाणे पीढ फलगसिज्जासथारट्ठाए समणस्स भगवओ

वीरस्स गुणकित्तणं करेमाणे सद्दालपुत्त समणोवा सय एव वयासी ॥ "आगए ण, देवाणुप्पिया, इह महामाहणे" ॥ २१६ ॥

तब गोशाल मङ्खलिपुत्र शब्दालपुत्र श्रमणोपासकसे अना दर या असत्कार प्राप्त करने पर भी आसन, फलक शय्या या सस्तारक ग्रहण करनेके लिये श्रमण भगवान् महावीर-जीका गुण कीर्त्तन करते हुए शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको ऐसे बोला। "हे देवानुप्रिय! यहा एक परम दयालु पुरुष पधारे है" ॥ २१६ ॥

तए ण से सद्दालपुत्ते समणोवासए गोसाल मङ्खलिपुत्त एव वयासी । "के णं, देवाणुप्पिया, महामाहणे?" ॥ २१७ ॥

तब वह शब्दालपुत्र श्रमणोपासक गोशाल मङ्खलिपुत्रको ऐसे बोला। "हे देवानुप्रिय! कौन महा दयावान् हैं?" ॥२१७॥

तए ण से गोसाले मंखलिपुत्ते सद्दालपुत्त समणोवासयं एव वयासी । "समणे भगव महावीरे महामाहणे" ॥

"से केणट्ठेण, देवाणुप्पिया, एव वुच्चइ समणे भगव महावीरे महामाहणे?" ॥

"एव खलु, सद्दालपुत्ता, समणे भगवं महावीरे महामाहणे उप्पन्नणाणदंसणधरे जाव महियपूइए जाव तच्चकम्मसम्पया सम्पउत्ते। से तेणट्ठेणं, देवाणुप्पिया, एव वुच्चइ समणे भगवं महावीरे महामाहणे। आगए णं, देवाणुप्पिया, इहं महागोवे" ॥

"के ण, देवाणुप्पिया, महागोवे?" ॥

"समणे भगव महावीरे महागोवे" ॥

"से केणट्ठेण, देवाणुप्पिया, जाव महागोवे?" ॥

"एव खलु, देवाणुप्पिया, समणे भगवं महावीरे ससाराडवीए बहवे जीवे नस्समाणे विणस्समाणे खज्जमाणे छिज्जमाणे भिज्जमाणे लुप्पमाणे विलुप्पमाणे धम्ममएणं दण्डेण सारक्खमाणे सङ्गोवेमाणे निव्वाणमहावाड साहत्थि सम्पावेइ। से तेणट्ठेणं, सद्दालपुत्ता, एवं वुच्चइ समणे भगवं महावीरे महागोवे। आगए ण, देवाणुप्पिया, इहं महासत्थवाहे" ॥

"के णं, देवाणुप्पिया, महासत्थवाहे?" ॥

"सद्दालपुत्ता, समणे भगवं महावीरे महासत्थवाहे" ॥

"से केणट्ठेणं ?" ॥

"एवं खलु, देवाणुप्पिया, समणे भगवं महावीरे संसाराडवीए बहवे जीवे नस्समाणे विणस्समाणे जाव विलुप्पमाणे धम्ममएणं पन्थेणं सारक्खमाणे निव्वाणमहापट्टणाभिमुहे साहत्थिं सम्पावेइ। से तेणट्ठेणं, सद्दालपुत्ता, एवं वुच्चइ समणे भगवं महावीरे महासत्थवाहे। आगए णं, देवाणुप्पिया, इह महाधम्मकही" ॥

"केणं, देवाणुप्पिया, महाधम्मकही ?" ॥

"समणे भगवं महावीरे महाधम्मकही" ॥

"से केणट्ठेणं समणे भगवं महावीरे महाधम्मकही ?" ॥

"एवं खलु, देवाणुप्पिया, समणे भगवं महावीरे महइमहालयंसि संसारंसि बहवे जीवे नस्समाणे विणस्समाणे उम्मग्गपडिवन्ने सप्पहविप्पणट्ठे मिच्छत्तबलाभिभूए अट्ठविहकम्मतमपडलपडोच्छन्ने

बहूहि अट्ठेहि य जाव वागरणेहि य चाउरन्ताओ संसारकन्ताराओ साहत्थि नित्थारेइ । से तेणट्ठेणं, देवाणुप्पिया, एवं वुच्चइ समणे भगवं महावीरे महाधम्मकही । आगए णं, देवाणुप्पिया, इह महानिज्जामए" ॥

"के णं, देवाणुप्पिया, महानिज्जामए?" ॥
"समणे भगवं महावीरे महानिज्जामए" ॥
"से केणट्ठेणं?" ॥

"एवं खलु, देवाणुप्पिया, समणे भगवं महावीरे संसारमहासमुद्दे बहवे जीवे नस्समाणे विणस्समाणे बुड्डमाणे निबुड्डमाणे उप्पियमाणे धम्ममईए नावाए निव्वाण तीराभिमुहे साहत्थि सम्पावेइ । से तेणट्ठेणं, देवाणुप्पिया, एवं वुच्चइ समणे भगवं महावीरे महानिज्जामए' ॥ २१८ ॥

तब वह गोशाल मङ्खलिपुत्र शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको ऐसे बोला । "श्रमण भगवान् महावीरजी परम दयालु हैं" ॥ (शब्दालपुत्रने पूछा) "हे देवानुप्रिय ! तू किस कारण कहता है कि श्रमण भगवान् महावीरजी परम दयालु है?" ॥

(गोशालने उत्तर दिया) "हे शब्दालपुत्र! निश्चयसे श्रमण भगवान् महावीरजी महाकारुणिक, ज्ञानदर्शनके धारक यावत् परम पूज्य यावत् सत्य कर्म सम्पत्तिसे युक्त हैं। हे देवानुप्रिय! इस कारण मैं ऐसे कहता हू कि श्रमण भगवान् महावीरजी महाकृपालु है । हे देवानुप्रिय! एक महागोप यहा पधारे हैं" ॥

(शब्दालपुत्रने पूछा) "हे देवानुप्रिय! महागोप कौन हैं?" ॥

(गोशालने उत्तर दिया) "श्रमण भगवान् महावीरजी महागोप हैं!" ॥

(शब्दालपुत्रने पुन पूछा) "हे देवानुप्रिय! तू किस कारण कहता है कि श्रमण भगवान् महावीरजी महागोप हैं?"।

(गोशालने उत्तर दिया) "हे देवानुप्रिय! श्रमण भगवान् महावीरजी ससाररूपी महारण्यमें बहुतसे जीवोंको, नष्ट विनष्ट, खादित, खण्डित, भेदित, लुप्त वा विलुप्त होनेसे धर्मरूपी दण्डके द्वारा उनकी रक्षा या सभाल करते हुये अपने हस्तकमलोंसे मोक्षके पथपर आरूढ करते हैं इसका रण, हे शब्दालपुत्र! मैं कहता हू कि श्रमण भगवान् महावीरजी महागोप हैं । हे देवानुप्रिय! यहा महासार्थवाही पधारे हैं" ॥

(शब्दाल पुत्रने फिर पूछा) "हे देवानुप्रिय! कौन महासार्थवाही हैं!" ॥

(गोशालने उत्तर दिया) "हे शब्दालपुत्र ! श्रमण भगवान् महावीरजी महासार्थवाही हैं ।

(शब्दालपुत्र बोला) "हे देवानुप्रिय ! तू किस लिये कहता है कि श्रमण भगवान् महावीरजी महासार्थवाही है ?" ।

(गोशालने उत्तर दिया) "हे देवानुप्रिय ! निश्चयसे श्रमण भगवान् महावीरजी इस ससार अटवीमें बहुत जीवोंको नष्ट विनष्ट यावत् विलुप्त होनेसे उनकी रक्षा और सभाल करते हुये अपने हस्तकमलोंसे धर्ममय दण्डसे नगररूपी निर्वाणके पथरूपी मुखमें प्रविष्ट करते हैं इसकारण, हे शब्दालपुत्र ! मैं कहता हू कि श्रमण भगवान् महावीरजी महासार्थवाही हैं। हे देवानुप्रिय ! यहा महाधर्मोपदेशक पधारे हैं ॥

(शब्दालपुत्रने पूछा) "हे देवानुप्रिय ! "धर्मोपदेशवक्ता कौन है ?" ॥

(गोशालने उत्तर दिया) 'श्रमण भगवान् महावीरजी महाधर्मोपदेशक हैं" ॥

(शब्दालपुत्रने फिर पूछा) "श्रमण भगवान् महावीरजी किस प्रकार महाधर्मोपदेशक है ?" ॥

(गोशालने उत्तर दिया) "हे देवानुप्रिय ! श्रमण भगवान् महावीरजी इस अपार ससारमें अनेक जीवोंको जिन्होंने मिथ्यात्वके अधीन होकर और आठ प्रकारके कर्मरूपी घोर अन्धकारसे प्रत्यवच्छन्न होकर सत्य मार्गको छोडकर

को ग्रहण किया है (उनको) अनेक अर्थ, हेतु यावत् व्याकरण (प्रश्नोत्तर) द्वारा समझाकर तथा निरुत्तर करके अपने हस्तकमलोंसे इस चातुरन्त ससारसे निस्तरण कराते है इसलिये, हे देवानुप्रिय! मै कहता हूँ कि श्रमण भगवान् महावीरजी महाधर्म्मोपदेशवक्ता हैं। हे देवानुप्रिय! यहा एक महान् नियामक पधारे हैं" ॥

(शब्दालपुत्रने फिर पूछा) "हे देवानुप्रिय! कौन महान् नियामक है?" ॥

(गोशालाने उत्तर दिया) "श्रमण भगवान् महावीरजी महानियामक (धार्मिक जहाजके रक्षक) हैं" ॥

(शब्दालपुत्रने फिर पूछा) "कैसे श्रमण भगवान् महावीरजी महानियामक हैं?" ॥

(गोशालने उत्तर दिया) "हे देवानुप्रिय! श्रमण भगवान् महावीरजी इस ससाररूपी महासमुद्रमें नष्ट होते हुये तथा डूबते हुए बहुत जीवोंको धर्ममयी नावमें स्थान देकर निर्वाणरूपी तीरपर अपने हस्तकमलोंसे पहुचाते है इसलिये, हे देवानुप्रिय! मैं कहता हू कि श्रमण भगवान् महावीरजी महानियामक है" ॥ २१८ ॥

तएणं से सद्दालपुत्ते समणोवासए गोसाल मंखलिपुत्तं एवं वयासी। "तुब्भे णं, देवाणुप्पिया, इय-

च्छेया जाव इयनिउणा इयनयवादी इयउवएस-
लद्धा इयविणाणपत्ता, पभू, णं तुब्भे मम धम्माय-
रिएण धम्मोवएसएण भगवया महावीरेणं सद्धि
विवाद करेत्तए?" ॥

"नो तिणट्ठे समट्ठे' ॥

"से केणट्ठेण, देवाणुप्पिया, एव वुचइ नो खलु
पभू तुब्भे मम धम्मायरिएण जाव महावीरेण सद्धि
विवादं करेत्तए?" ॥

"सद्दालपुत्ता, से जहानामए केइपुरिसे तरुणे
जुगव जाव निउणसिप्पोवगए एगं महं अय वा
एलयं वा सूयर वा कुक्कुड वा तित्तिर वा वट्टय
वा लावय वा कवोय वा कविञ्जलं वा वायस वा
सेणय वा हत्थसि वा पायसि वा खुरसि वा पुच्छसि
वा पिच्छंसि वा सिङ्गसि वा विसाणसि वा रोमंसि
वा जहि जहि गिण्हइ, तहि तहिं निच्चलं निप्फन्दं
धरेइ । एवामेव समणे भगव महावीरे मम वहूहि
अट्ठेहि य हेऊहि य जाव वागरणेहि य जहिं जहि
गिण्हइ, तहि तहि निप्पट्ठ पसिणवागरणं करेइ ।

से तरण्टेणं, सद्दालपुत्ता, एवं वुच्चइ नो खलु पभू अहं तव धम्मायरिएण जाव महावीरेण सद्धिं विवाद करेत्तए" ॥ २१९ ॥

तब वह शब्दालपुत्र श्रमणोपासक गोशालमङ्खलिपुत्रको ऐसे बोला । "हे देवानुप्रिय! "तू अत्यन्त चतुर, निपुण, और नीतिवक्ता है तुझको उपदेश और विज्ञान प्राप्त होगये हैं । क्या तू मेरे धर्म्माचार्य, धर्मोपदेशक प्रभू भगवान् महावीरजीके साथ विवाद कर सक्ता है ?" ।

(गोशालने उत्तर दिया) "मै विवाद करनेके समर्थ नहीं हू" ॥

(शब्दालपुत्रने पूछा) "हे देवानुप्रिय! किस कारणसे तू ऐसा कहता है कि तू मेरे धर्माचार्य्य यावत् महावीरजीके साथ विवाद करनेके असमर्थ है" ॥

(गोशालने उत्तर दिया) "हे शब्दालपुत्र! जैसे एक तरुण (युवा) युगवान् यावत् शिल्पकारी पुरुष किसी महान् अज, उरभ्र, (मेढ़ा) शूकर, कुक्कुट, तित्तिर, वर्तक, लावक, कपोत (कबूतर), कपिञ्जल, (पपीहा) वायस, श्येनक (बाज़) को जहा जहा हस्त, पाद, पुच्छ, पक्ष, शृङ्ग, विषाण, रोमपर पकडता है, वहा वहा उस पक्षीको अचल वा निष्पन्द अर्थात् चलनेके असमर्थ कर

देता है ऐसे ही श्रमण भगवान् महावीरजी मुझे बहुत अर्थ, हेतु यावत् व्याकरणसे जहा जहा पकडेंगे वहां वहा मेरी कल्पनाओंका खण्डन कर देंगे। इस कारणसे, हे शब्दालपुत्र ! मैं कहता हू कि मैं तेरे प्रभु धर्म्माचार्य्य यावत् महावीरजीके साथ विवाद नहीं कर सक्ता हू" ॥ २१९ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते समणोवासए गोसाल मखलिपुत्त एव वयासी । "जम्हा ण, देवाणुप्पिया, तुब्भे मम धम्मायरियस्स जाव महावीरस्स सन्तेहि तच्चेहि तहिएहि सब्भूएहि भावेहि गुणकित्तण करेह, तम्हाण अह तुब्भे पाडिहारिएणं पीढ जाव सथारएण उवनिमन्तेमि । नो चेव णं धम्मो त्ति वा तवो त्ति वा । त गच्छह ण तुब्भे मम कुम्भारावणेसु पाडिहारिय पीढ फलग जाव ओगिण्हित्ताण विहरह' ॥ २२० ॥

तब वह शब्दालपुत्र श्रमणोपासक गोशाल मङ्खलिपुत्रको ऐसे बोला । 'हे देवानुप्रिय ! क्योंकि तूने मेरे धर्म्माचार्य्य यावत् महावीरजीके सत्य, तथ्य, अकृत्रिम और सद्भूत भावोंकी स्तुति अर्थात् प्रशसा की है, इसलिये मैं तुझे प्रातिहारिक आसन यावत् सस्तारकके लिये आमन्त्रित करता हूं ।

किन्तु धर्म्म या तपके लिये नहीं । इसकारण तू जा और मेरी कुम्भकारपण्यशालाओंमें प्रातिहारिक आसन, पीढ यावत् सस्तारक ग्रहण करके वहाही विचर" ॥ २२० ॥

तए ण से गोसाले मङ्खलिपुत्ते सद्दालपुत्तस्स समणोवासयस्स एयमट्ठ पडिसुणेइ, २ त्ता कुम्भारावणेसु पाडिहारिय पीढ जाव ओगिण्हित्ताण विहरइ ॥२२१॥

तब वह गोशाल मङ्खलिपुत्र शब्दालपुत्र श्रमणोपासककी इस वातको सुनकर कुम्भकार पण्यशालाओंमें प्रातिहारिक पीढ यावत् सस्तारक ग्रहण करके वहाही विचरने लगा ॥२२१॥

तए ण से गोसाले मखलिपुत्ते सद्दालपुत्त समणोवासय जाहे नो सचाएइ बहूहि आघवणाहि य पराणवणाहि य सराणवणाहि य विराणवणाहि य निग्गन्थाओ पावयणाओ चालित्तए वा खोभित्तए वा विपरिणामित्तए वा, ताहे सन्ते तन्ते परितन्ते पोलासपुराओ नगराओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता वहिया जणवयविहार विहरइ ॥ २२२ ॥

तब वह गोशाल मखलिपुत्र बहुत आख्यान, व्याख्या और सञ्ज्ञापनसे शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको जिन वचनोंसे चलायमान, क्षोभित, और परिणामोंसे विपरीत करनेके

असमर्थ अपने आपको जानकर, और श्रान्त, तान्त वा निराश होकर पोलासपुर नगरसे निकलकर वाहिर अन्य देशको चला गया ॥ २२२ ॥

तए णं तस्स सद्दालपुत्तस्स समणोवासयस्स बहूहिं सील जाव भावेमाणस्स चोद्दस संवच्छरा वइक्कन्ता । पण्णरसमस्स संवच्छरस्स अन्तरा वट्टमाणस्स पुव्वरत्तावरत्तकाले जाव पोसहसालाए समणस्स भगवओ महावीरस्स अन्तिय धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताण विहरइ ॥ २२३ ॥

तव बहुत शीलव्रतसे (यावत्) अपना कल्याण करते हुये शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको चतुर्दश वर्ष व्यतीत होगये (वर्त्तमान पन्द्रहने वर्षके मध्यमें अर्ध रात्रिके समय (यावत्) पोषधशालामें श्रमण भगवान् महावीरजीके पास ग्रहण किये हुये धर्मको पालता हुआ जब वह विचरता था ॥ २२३ ॥

तए णं तस्स सद्दालपुत्तस्स समणोवासयस्स पुव्वरत्तावरत्तकाले एगे देवे अन्तिय पाउब्भवित्था ॥२२४॥

तव उस शब्दालपुत्र श्रमणोपासकके पास अर्धरात्रिके समय एक देवता प्रगट हुआ ॥ २२४ ॥

तए णं से देवे एगं महं नीलुप्पल जाव असिं

गहाय सद्दालपुत्त समणोवासय एव वयासी । जहा चुलणीपियस्स तहेन देवो उवसग्ग करेइ । नवर एक्केक्के पुत्ते नव मससोल्लए करेइ । जाव कणीयस घाएइ, २ त्ता जाव आयञ्चइ ॥ २२५ ॥

तन वह देवता एक महान् नीलोत्पल खड्गको ग्रहण करके शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको ऐसे बोला । जैसे चुलणीपिताके पुत्रोंके साथ वर्त्ताव हुआ था उसीप्रकार देवने शब्दालपुत्रके पुत्रोंके साथ उपद्रव किया इतना विशेष कि यहा एक एक पुत्रके मासके नौ नौ खण्ड किये यावत्) कनीयस पुत्रको मारकर उसको दग्ध करके रुधिर और मासको उसके शरीरपर छिड़का ॥ २२५ ॥

तएणं से सद्दालपुत्ते समणोवासए अभीए जाव विहरइ ॥ २२६ ॥

तन वह शब्दालपुत्र श्रमणोपासक भय रहित यावत् धर्ममें दृढ रहा ॥ २२६ ॥

तएण से देवे सद्दालपुत्त समणोवासय अभीय जाव पासित्ता चउत्थ पि सद्दालपुत्त समणोवासय एव वयासी । "ह भो सद्दालपुत्ता, समणोवासया, अपत्थियपत्थिया जाव न भजसि, तओ ते जा इमा

अग्गिमित्ता भारिया धम्मसहाइया धम्मविइज्जिया धम्माणुरागरत्ता समसुहदुक्खसहाइया, तं ते साओ गिहाओ नीणेमि, २ त्ता तव अग्गओ घाएमि, २ त्ता नव मससोल्लए करेमि, २ त्ता आदाणभरियंसि कडाहयंसि अद्दहेमि, २ त्ता तव गाय मसेण य सोणिएण य आयश्चामि, जहा णं तुमं अट्टदुहट्ट जाव ववरोविज्जसि" ॥ २२७ ॥

तय यह देवता शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको अभीत यावत् देखकर चतुर्थ वार शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको ऐसे बोला। "हे शब्दालपुत्र श्रमणोपासक! कुमार्ग इच्छक! यदि तू आज शीलव्रत यावत् भग न करेगा तो मै आज तेरी अग्निमित्रा भार्याको जो धर्म्म सहायिका, धर्मसे परिचित, वा धर्मानुरागयुक्त और सुखदु खको सम्यक् प्रकारसे सहन करनेवाली है, (उसको) तेरे गृहसे निकालकर तेरे आगे उसका वध करूगा, फिर उसके मासके नौ ९ शूल्यक करके आदाणसे भरे हुये कटाहमें दहन करके तेरे शरीरपर मास और रुधिरको छिडकूगा जिससे तू आर्त और दु खोंके वश होकर जीवनसे विमुक्त हो जावेगा ॥ २२७ ॥

तए णं से सद्दालपुत्ते समणोवासए तेणं देवेणं

एव वुत्ते समाणे अभीए जाव विहरइ ॥ २२८ ॥

तव वह शब्दालपुत्र श्रमणोपासक उस देवतासे ऐसा कहे जाने पर भयरहित यावत् धर्ममें स्थिर रहा ॥ २२८ ॥

तएण से देवे सद्दालपुत्त समणोवासय दोच्च पि तच्चं पि एव वयासी । "हं भो सद्दालपुत्ता समणोवासया," त चेव भणइ ॥ २२९ ॥

तब वह देवता शब्दालपुत्र श्रमणोपासकको दो तीन वार ऐसे बोला । हे शब्दालपुत्र श्रमणोपासक ! यदि तू आज शीलमत भग न करेगा तो मैं आज तेरी अग्निमित्रा भार्याको तेरे गृहसे निकालकर उसको मारकर और आदाणसे पूरित कटाह में उसको दग्ध करके मास और रुधिरको तेरे शरीर पर सिञ्चन करूगा इत्यादि उसी प्रकार कहा ॥ २२९ ॥

तए ण तस्स सद्दालपुत्तस्स समणोवासयस्स तेण देवेणं दोच्च पि तच्च पि एव वुत्तस्स समाणस्स अय अज्झत्थिए ४ समुप्पन्ने । एव जहा चुलणीपिया तहेव चिन्तेइ । "जेण मम जेट्ठ पुत्त, जेण मम मज्झिमय पुत्तं, जेण मम कणीयसं पुत्त जाव आयञ्चइ, जा वि य ण मम इमा अग्गिमित्ता भारिया समसुहदुक्खसहाइया, त पि य इच्छइ साओ

गिहाओ नीणेत्ता मम अग्गओ घाएत्तए । त सेयं खलु ममं एयं पुरिसं गिण्हित्तए" त्ति कट्टु उट्ठाइए जहा चुलणीपिया तहेव सव्वं भाणियव्वं नवरं अग्गिमित्ता भारिया कोलाहलं सुणित्ता भणइ । सेस जहा चुलणीपिया वत्तव्वया । नवरं अरुणभूए विमाणे उववन्ने जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ५ ॥ २३०॥

तव दो तीन वार ऐसा कहा जानेपर उस शब्दालपुत्र श्रमणोपासकके मनमें अध्यास्थित सकल्प उत्पन्न हुआ । अहो! यह अनार्य पुरुप वडा पापकर्म करता है क्योंकि इसने मेरे ज्येष्ट, मध्यम और कनीयस पुत्रोंको मारकर यावत् उनको कटाहमें दहन करके मास और रुधिरको मेरी देहपर छिडका है और अव मेरी प्रिया अग्निमित्राकोभी जो सुख तथा दु खको भली प्रकारसे सहन करती है (उसको) मेरे गृहसे निकालकर उसका वध करना चाहता है इस लिये उचित हो यदि मैं इसे पकडू इत्यादि चुलणीपिताके समान ही विचार किया ऐसा विचार कर जव शब्दालपुत्र उठा तव उसके हाथमें स्तम्भ आगया और देवता आकाशमें चला गया इस कारण उसने कोलाहल किया (चुलणीपिताके समान १३८–१४२ उसीप्रकार सब कहना चाहिये) फिर अग्निमित्राने कोलाहल शब्दको सुनकर अपने पतिसे उसका

कारण पूछा यावत् चुलणीपिताके समान उसने सर्व वृत्तात कह सुनाया और अपनी भार्या के कथनानुसार दण्ड ग्रहण किया (शेष जैसे चुलणीपिताके जीवन वृत्तातमें लिखा गया है उसी तरह यहाभी कहना चाहिये अथवा समझ लेना चाहिये)। शब्दालपुत्र यहासे काल करके अरणभूत विमानमें देवता उत्पन्न हुआ यावत् देवलोकसे आयु पूर्ण करके महाविदेह क्षेत्रमें आगे सिद्ध होगा ॥ २३० ॥

॥ निक्खेवो ॥

॥ निक्षेप ॥

सत्तमस्स अङ्गस्स उवासगदसाण सत्तम अज्झयण समत्त ॥

सप्तमाङ्ग उपासकदशाका सप्तम अध्ययन समाप्त हुआ ॥

अट्ठम अज्झयण ।

अष्टम अध्ययन

अट्ठमस्स उक्खेवो ॥

आठवें अध्ययनका वर्णन ॥

एव खलु, जम्बू, तेण कालेण तेण समएण रायगिहे नयरे । गुणसिले चेइए । सेणिए राया ॥ २३१ ॥

हे जम्बू! उसकाल, उस समय एक राजगृह नामक नगर था। उसमें गुणशिल नामक एक उद्यान था। श्रेणिक राजा वहा राज्य करता था ॥ २३१ ॥

तत्थ ण रायगिहे महासयए नामं गाहावई परिवसइ अड्ढे जहा आणन्दो। नवरं अट्ठ हिरणकोडीओ सकंसाओ निहाणपउत्ताओ अट्ठ हिरणकोडीओ सकसाओ वड्ढिपउत्ताओ अट्ठहिरणकोडीओ सकसाओ पवित्थर पउत्ताओ अट्ठ वया दसगोसाहस्सिएणं वएणं ॥ २३२ ॥

उस राजगृह नगरमें महाशतक नामक गाथापति रहता था जो आनन्दके समान अति धनवान् था। इतना विशेष कि उसके पास आठ करोड स्वर्ण संकास्य निधान प्रयुक्त, आठ करोड स्वर्ण सकास्य वृद्धि प्रयुक्त, आठ करोड स्वर्ण सकास्य प्रविस्तर प्रयुक्त और (दशसहस्र गोका एक वर्ग) आठ वर्ग थे ॥ २३२ ॥

तस्स ण महासयगस्स रेवईपामोक्खाओ तेरस भारियाओ होत्था, अहीण जाव सुरूवाओ ॥ २३३ ॥

उस महाशतककी तेरह (१३) भार्या थीं जो सर्वाङ्ग

१ (एक सकास ६४ परका होता है)

पूर्ण यावत् परम सुन्दर या सौन्दर्य्ययुक्त थीं जिनमें 'रेवती' मुख्य थी ॥ २३३ ॥

तस्सरा महासयगस्स रेवईए भारियाए कोलघरियाओ अट्ट हिरणकोडीओ अट्ठवया दसगोसाहस्सिएण वएण होत्था । अवसेसाण दुवालसण्हं भारियाण कोलघरिया एगमेगा हिरणकोडी एगमेगे य वए दसगोसाहस्सिएण वएण होत्था ॥ २३४ ॥

उस महाशतककी रेवती नामिका भार्याके पास यौतुक (योगकाल अर्थात् विवाहके समय मिला हुआ धन) की आठ करोड स्वर्णमुद्रा और आठही वर्ग (दशसहस्र १०००० गौका एक वर्ग) थे । अन्य द्वादश (१२) पत्नियोंके पास यौतुककी एक एक करोड स्वर्ण मुद्रा और दस हजार गौका एक एक वर्ग था ॥ २३४ ॥

तेण कालेण तेण समएण सामी समोसढे । परिसा निग्गया । जहा आणन्दो तहा निग्गच्छइ । तहेव सावयधम्म पडिवज्जइ । नवर अट्ट हिरणकोडीओ सकसाओ उच्चारेइ, अट्ठ वया, रेवई पामोक्खाहिं तेरसेहिं भारियाहिं अवसेस मेहुणविहिं पच्चक्खाइ । सेस सवं तहेव । इम च ण एयारूवं

अभिग्गह अभिगिरहइ। "कल्लाकल्लिं कप्पइ मे वेदोणि-याए कंसपाईए हिरणभरियाए संववहरित्तए" ॥२३५॥

उसकाल, उस समय श्रमण भगवान् महावीरजी पधारे नगरवासी दर्शनोकी चेष्टा करते हुये समवसरणमें गये तब महाशत्तकभी आनन्दके समान सेवकोंसे वेष्टित हुआ २ भगवानूके समीप गया और उसने उसीप्रकारही श्रावकधर्मको अंगीकार किया इतना विशेष कि उसने आठ करोड सुवर्ण-सकास्य और आठही वर्गोंका आगार रखा और रेवती आदि त्रयोदश स्त्रियोंके सिवाय शेष मैथुनविधिका प्रत्याख्यान अर्थात् त्याग किया शेष नियम सब उसी तरह किये पश्चात् यह अभिग्रह ग्रहण किया कि "मुझे प्रत्येक दिन दो द्रोण सुवर्णसे भरे हुये कास्य पात्रसे अधिक व्यापार करना नहीं कल्पता है" ॥ २३५ ॥

तएणं से महासयए समणोवासए जाय अभि-गय जीवाजीवे जाव विहरड ॥ २३६ ॥

तब जीवाजीवज्ञ महाशतक श्रमणोपासक निर्ग्रन्थियोंको प्राशुक एषणीय अन्न तथा वस्त्रादि अनुप्रदान करता हुआ समय व्यतीत करने लगा ॥ २३६ ॥

---

१ एक द्रोण चौंतीस सेर परिमाण होता है इसलिये दो द्रोण ६८ सेरके हुये इससे निश्चय हुआ कि महाशतकने ६८ सेर सुवर्णसे अधिक सोनेसे व्यापार करनेका त्याग किया

तएणं समणे भगव महावीरे वहिया जणवय-विहारं विहरइ ॥ २३७ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजी किसी अन्य देशको विहार कर गये ॥ २३७ ॥

तए ण तीसे रेवईए गाहावइणीए अन्नया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकाल समयसि कुडुम्ब जाव इमेयारूवे अज्झत्थिए ४ । "एव खलु अह इमासिं दुवालसएहं सवत्तीण विघाएण नो सचाएमि महासयएणं समणोवासएण सद्धिं उरालाइ माणुस्सयाइ भोगभोगाइ भुञ्जमाणी विहरित्तए । त सेय खलु मम एयाओ दुवालस वि सवत्तियाओ अग्गिप्पओगेण वा सत्थप्पओगेण वा विसप्पओगेण वा जीवियाओ ववरोवित्ता, एयासि एगमेग हिरण्णकोडि एगमेगं वय सयमेव उवसम्पज्जित्ताणं महासयएण समणोवासएण सद्धि उरालाइं जाव विहरित्तए" ॥ एव सम्पेहेइ, २ त्ता तासि दुवालसण्ह सवत्तीण अन्तराणि य छिद्दाणि य विरहाणि य पडिजागरमाणी विहरइ ॥ २३८ ॥

तब अन्यदा अर्धरात्रिके समय कुटुम्बके विषयमें विचार करते हुये रेवती गृहपत्नीके मनमें इस रूपमें अध्यास्थित सकल्प उत्पन्न हुआ। "निश्चयसे अब मे इन द्वादश सौतिनोंके कारण महाशतक श्रमणोपासकके साथ उदार वैवाहिक भोग नही भोग सकी इसलिये श्रेष्ठ हो यदि मैं इन द्वादश (१२) ही सौतिनोंको अग्नि, शस्त्र या विपके प्रयोगसे जीवनसे विमुक्त कर दू और इनकी सर्व सपत्ति अर्थात् एक एक करोड सुवर्ण मुद्रा और एक एक वर्गको छीनकर महाशतक श्रमणोपासकके साथ उदार भोग भोगती हुई विचरू"। ऐसे विचारकर उन द्वादशही सौतिनोंको एकान्त अवस्थामें जीवनसे विमुक्त करनेके लिये अवसर तथा छिद्र सोचने लगी ॥ २३८ ॥

तए ण सा रेवई गाहावइणी अन्नया कयाइ तासि दुवालसण्हं सवत्तीण अन्तरं जाणित्ता छ सवत्तीओ सत्थप्पओगेण उद्दवेइ, २ त्ता छ सवत्तीओ विसप्पओगेण उद्दवेइ, २ त्ता तासि दुवालसण्हं सवत्तीण कोलघरियं एगमेगं हिरणकोडि एगमेग वयं सयमेव पडिवज्जइ, २ त्ता महासयएणं समणोवासएण सद्धि उरालाइं भोगभोगाइ भुञ्जमाणी विहरइ ॥ २३९ ॥

तब उस रेवती गृहपत्नीने अवकाश पाकर अन्यदा समय उन द्वादशही सौतिनों को मार दिया ६ सौतिनों को शस्त्र के प्रयोगसे और ६ सौतिनोंको विषके प्रयोगसे हनन करके उनकी एक एक करोड़ सुवर्णमुद्रा और एक एक वर्गको छीन लिया और पश्चात् महाशत्तक श्रमणोपासक के साथ उदार भोग भोगती हुई समय व्यतीत करने लगी ॥ २३९ ॥

तए णं सा रेवई गाहावइणी मसलोलुया मसेसु मुच्छिया अज्झोववन्ना बहुविहेहि मसेहि य सोल्लेहि य तलिएहि य भज्जिएहि य सुर च महु च मेरगं च मज्ज च सीधु च पसन्न च आसाएमाणी ४ विहरइ ॥ २४० ॥

तब मासलम्पटा, मासमूच्छिता और मासाध्युपपन्ना रेवती गृहपत्नी बहुत प्रकारके तलित तथा भजित मासशूल्यक और रस, मधु, मेरक, मद्य, सीधु, सुरादिका सेवन करने लगी ॥ २४० ॥

तए णं रायगिहे नयरे अन्नया कयाइ अमाघाए घुट्टे यावि होत्था ॥ २४१ ॥

तब राजगृह नगरमें अन्यदा समय "किसी जीवको मत मारो" इसप्रकारकी राजाकी ओरसे उद्घोषणा करवाई गई ॥ २४१ ॥

तए णं सा रेवई गाहावइणी मसलोलुया मंसेसु मुच्छिया ४ कोलघरिए पुरिसे सद्दावेइ, २ त्ता एवं वयासी । "तुब्भे, देवाणुप्पिया, मम कोलघरिएहिंतो वएहिंतो कल्लाकल्लि दुवे दुवे गोणपोयए उद्दवेह, २ त्ता मम उवणेह" ॥ २४२ ॥

तब मांसलम्पटा मांसमूर्च्छिता रेवती गृहपत्नी कौलगृहिक पुरुषोंको बुलाकर ऐसे बोली! "हे देवानुप्रियो! मेरे कौलगृहिक वर्गोंमेंसे तुम प्रत्येक दिवस दो पशुओंको मारकर मुझे अर्पण किया करो" ॥ २४२ ॥

तए णं ते कोलघरिया पुरिसा रेवईए गाहावइणीए "तह" त्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणन्ति, २ त्ता रेवईए गाहावइणीए कोलघरिएहिंतो वएहिंतो कल्लाकल्लिं दुवे दुवे गोणपोयए वहेन्ति, २ त्ता रेवईए गाहावइणीए उवणेन्ति ॥ २४३ ॥

तब कौलगृहिक पुरुषोंने ("ऐसाही होगा" ऐसे वचन उच्चारण करके) रेवती गृहपत्नीकी आज्ञाको विनयसे श्रवण किया और फिर रेवती गृहपत्नीके कुलगृहके वर्गोंमेंसे नित्यप्रति दो दो पशु वधकरके रेवती गृहपत्नीको अर्पण करने लगे ॥ २४३ ॥

तए ण सा रेवई गाहावइणी तेहि गोणमसेहि सोल्लेहि य ४ सुर च ६ आसाएमाणी ४ विहरइ २४४

तब वह रेवती गृहपत्नी उन पशुपुओंके मासशूल्यक (इत्यादि) तथा रसादि को सेवन करती हुई रहने लगी ॥२४४॥

तए णं तस्स महासयगस्स समणोवासगस्स बहूहि सील जाव भावेमाणस्स चोद्दस सवच्छरा वइक्कन्ता। एव तहेव जेट्ठ पुत्त ठवेइ जाव पोसहसालाए धम्मपणत्तिं उवसम्पज्जित्ताण विहरइ ॥ २४५ ॥

तब बहुत शीलादि यावत् पालन करते हुये उस महाशतक श्रमणोपासकको चतुर्दश (१४) वर्ष व्यतीत हो गये। तदुपरान्त उसने उसी प्रकारही ज्येष्ठ पुत्रको गृहमें मुख्य स्थापन किया और स्वय यावत् पौषधशालामें जाकर गृहीतधर्मका पालन करता हुआ समय व्यतीत करने लगा ॥ २४५॥

तए ण सा रेवई गाहावइणी मत्ता लुलिया विइण्णकेसी उत्तरिज्जय निकड्ढमाणी २ जेणेव पोसहसाला जेणेव महासयए समणोवासए तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता मोहुम्माय जणणाइ सिङ्गारिहाइ इत्थिभावाइ उवदसेमाणी २ महासयय समणोवासय एव वयासी। "ह भो महासयया समणोवासया.

धम्मकामया पुराणकामया सग्गकामया मोक्खकामया धम्मकङ्खिया ४ धम्मपिवासिया ४, किरणं तुब्भं, देवाणुप्पिया, धम्मेण वा पुरणेण वा सग्गेण वा मोक्खेण वा, जरणं तुमं मए सद्धिं उरालाइं जाव भुञ्जमाणे नो विहरसि" ? ॥ २४६ ॥

तब कामके वश हुई २ वह रेवती गृहपत्नी अपने केशोको बखेरकर उत्तरीय(वस्त्र)को उतारकर जहा पोपधशाला थी वहा महाशतक श्रमणोपासकके पास गई और मोह तथा उन्माद (कामभोग) वर्धक शृङ्गाररूपी स्त्रीभावोंको दिखाती हुई महाशतक श्रमणोपासकको ऐसे बोली । भो महाशतक श्रमणोपासक! धर्म पुण्य स्वर्ग मोक्षेच्छुक! धर्म कात्तक ४! धर्मपिपासु ४! यदि तूं मेरे साथ उदार विषयरूपी सुख नहीं भोगता है तो तुझे, हे देवानुप्रिय! धर्म पुण्य स्वर्ग मोक्षसे क्या लाभ होगा? ॥ २४६ ॥

तएणं से महासयए समणोवासए रेवईए गाहावइणीए एयमट्ठं नो आढाइ नो परियाणाइ, अणाढायमाणे अपरियाणमाणे तुसिणीए धम्मज्झाणोवगए विहरइ ॥ २४७ ॥

तब उस महाशतक श्रमणोपासकने रेवती गृहपत्नीकी इस

बातपर किंचित् ध्यान न दिया और ना ही उसका आदर किया किन्तु मौन वृत्ति धारण की अपितु धर्म ध्यानमें अधिक प्रवृत्ति की ॥ २४७ ॥

तएण सा रेवई गाहावइणी महासयय समणो-वासय दोच्च पि तच्च पि एव वयासी । "हं भो" त चेव भणइ, सो वि तहेव जाव अणाढायमाणे अपरियाणमाणे विहरइ ॥ २४८ ॥

तब वह रेवती गृहपत्नी महाशतक श्रमणोपासकको दो तीनवार फिर ऐसे बोली । हे महाशतक श्रमणोपासक ! यदि तू मेरे साथ उदार भोग नहीं भोगता है तो, हे देवानुप्रिय ! तुझे धर्म पुण्य स्वर्ग मोक्षसे क्या लाभ होगा ? तब महाशतकने इस बात पर किंचित् ध्यान नहीं दिया किन्तु धर्म ध्यानमें अधिक प्रवृत्त हुआ ॥ २४८ ॥

तएण सा रेवई गाहावइणी महासयएण सम-णोवासएणं अणाढाइज्जमाणी अपरियाणिज्जमाणी जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया ॥२४९॥

तब वह रेवती गृहपत्नी महाशतक श्रमणोपासकसे नि-रादर वा अवज्ञाको प्राप्त हुई २ जिस दिशासे प्रगट हुई थी उसी दिशाको चली गई ॥ २४९ ॥

तएणं से महासयए समणोवासए पढम उवा-

सग पडिमं उवसम्पज्जित्ताण विहरइ । पढमं अहा-सुत्तं जाव एक्कारस वि ॥ २५० ॥

तब वह महाशतक श्रमणोपासक उपासककी प्रथम प्रतिज्ञाको पालता हुआ विचरने लगा । फिर एकादश (११) ही प्रतिज्ञाओंकी यथासूत्र यावत् आराधना की ॥ २५० ॥

तएणं से महासयए समणोवासए तेणं उरालेणं जाव किसे धमणिसन्तए जाए ॥ २५१ ॥

तब वह महाशतक श्रमणोपासक उस उदार तपसे यावत् धूमनिके सदृश शुष्क होगया ॥ २५१ ॥

तएणं तस्स महासययस्स समणोवासयस्स अन्नया कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकाले धम्मजागरियं जागरमाणस्स अयं अज्झत्थिए ४ । "एवं खलु अहं इमेणं उरालेण जहा आणन्दो तहेव अपच्छिममारणन्तियसलेहणाए झूसियसरीरे भत्तपाणपडियाइक्खिए कालं अणवकङ्खमाणे विहरइ ॥ २५२ ॥

तब उस महाशतक श्रमणोपासकके मनमें अर्धरात्रिके समय धर्मपर विचार करते हुये यह अध्यास्थित संकल्प उत्पन्न हुआ । "निश्चयसे मैं अब इस उदार तपसे धूमनिके

समान सूक गया हूं यावत् इसलिये श्रेष्ठ हो यदि मैं कल अनशन व्रत धारण करके कालकी इच्छा रहित विचरूं" ॥ ऐसा विचार कर वह द्वितीय दिवस सर्व प्रकारके अन्नपानका त्याग करके अपश्चिम मारणान्तिक अनशन व्रत धारण करके कालकी इच्छासे रहित होकर विचरने लगा ॥ २५२ ॥

तएणं तस्स महासयगस्स समणोवासगस्स सुभेणं अज्झवसाणेणं जाव खओवसमेण ओहिणाणे समुप्पन्ने । पुरत्थिमेणं लवणसमुद्दे जोयणसाहस्सियं खेत्तं जाणइ पासइ, एवं दक्खिणेणं पच्चत्थिमेणं, उत्तरेणं जाव चुल्लहिमवन्तं वासहरपव्वयं जाणइ पासइ, अहे इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए लोलुयच्चुयं नरयं चउरासीइवाससहस्सट्ठिइयं जाणइ पासइ ॥ २५३ ॥

तब उस महाशतक श्रमणोपासकको शुभ अध्यवसान होनेके कारण यावत् ज्ञानके विरोधक कर्मोंके क्षयोपशमक होनेसे अवधि ज्ञान प्राप्त हुआ जिसके बलसे उसने पूर्वदिशामें लवणसमुद्र और सहस्र योजन क्षेत्र जाना और देखा, इसी प्रकार दक्षिण और पश्चिम दिशामें जाना और देखा। उत्तर दिशामें यावत् लघु हिमालय (हैमवत) वासधर पर्वतको जाना

और देखा, अधोदिशामें रत्नप्रभा पृथ्वीमें लोलुपाच्युत नरकको जाना और देखा जिसमें चउरासी हजार ८४००० वर्षकी स्थिति है ॥ २५३ ॥

तएणं सा रेवई गाहावइणी अन्नया कयाइ मत्ता जाव उत्तरिज्जयं विकड्ढमाणी २ जेणेव महासयए समणोवासए जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता महासययं तहेव भणइ जाव दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी । "हं भो" तहेव ॥ २५४ ॥

तब वह मत्ता रेवती गृहपत्नी अन्यदा समय (यावत्) उत्तरीय (दुपट्टा) को शीर्षसे उतारकर जहां महाशतक श्रमणोपासक था जहां पोषधशाला थी वहां गई और महाशतकको उसीप्रकार सम्बोधन करके ऐसी बोली । हे महाशतक ! (यदि तू मेरे साथ भोग नहीं भोगता है तो, हे देवानुप्रिय! तुझे धर्म पुण्य स्वर्ग मोक्षसे क्या लाभ होगा? तब महाशतकने किंचित् मात्रभी ध्यान न दिया फिर रेवतीने दो तीन वार ऐसेही कहा । हे महाशतक ! यदि तू मेरे साथ उदार भोग नहीं भोगता है तो, हे देवानुप्रिय! तुझे धर्म पुण्य स्वर्ग मोक्षसे क्या लाभ होगा? फिरभी महाशतकने बिलकुल ध्यान न दिया और कुछ सत्कार नहीं किया किन्तु मौन वृत्ति धारण

की अपितु वह महाशतक धर्म ध्यानमें अधिक प्रवृत्त हुआ) ॥ २५४ ॥

तएणं से महासयए समणोवासए रेवईए गाहावइणीए दोच्च पि तच्च पि एव वुत्ते समाणे आसुरत्ते ४ ओहिं पउञ्जइ, २ त्ता ओहिणा आभोएइ, २ त्ता रेवइं गाहावइणि एव वयासी । "ह भो रेवई, अपत्थियपत्थिए ४, एवं खलु तुम अन्तो सत्तरत्तस्स अलसएण वाहिणा अभिभूया समाणी अट्टदुहट्टवसट्टा असमाहिपत्ता कालमासे काल किच्चा अहे इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए लोलुयच्चुए नरए चउरासीइवाससहस्सट्ठिइएसु नेरइएसु नेरइयत्ताए उववज्जिहिसि" ॥ २५५ ॥

तब उस महाशतक श्रमणोपासकने रेवती गृहपत्नीसे दो तीनवार ऐसा कहा जानेपर क्रोधयुक्त होकर (४) अवधि ज्ञानका प्रयोग किया और अवधि ज्ञानसे (रेवतीकी भविष्य दशाका) निश्चय करके रेवती गृहपत्नीको ऐसे बोला । हे अप्रार्थित रेवती ! निश्चयसे तू सप्त (७) रात्रिके मध्यमें अलसक व्याधिसे पीडित होकर आर्त्त और दुःखोंके वश होकर विना समाधि (ध्यान) के प्राप्त किये ही

अवसरपर मृत्यु पाकर रत्नप्रभामें लोलुपाच्युत नामक नरकमें नैरयिकोंके मध्यमें उत्पन्न होवेगी जहा चउरासी हजार ८४००० वर्षकी स्थिति है ॥ २५५ ॥

तएणं सा रेवई गाहावइणी महासयएणं समणोवासएणं एवं वुत्ता समाणी एवं वयासी । "रुट्ठे णं ममं महासयए समणोवासए, हीणे णं मम महासयए समणोवासए, अवज्झाया णं अहं महासयएणं समणोवासएणं, न नज्जइ णं, अहं केण विकुमारेणं मारिज्जिस्सामि" त्ति कट्टु भीया तत्था तसिया उव्विग्गा सञ्जायभया सणियं २ पच्चोसक्कइ, २ त्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता ओहय जाव झियाइ ॥ २५६ ॥

तब रेवती गृहपत्नी महाशत्तक श्रमणोपासकसे ऐसा कहा जानेपर (अपने आपको) ऐसे बोली । "महाशत्तक श्रमणोपासक मेरेपर रुष्ट होगया है, महाशत्तक श्रमणोपासक ने अन प्रीतिको छोड दिया है, महाशत्तक श्रमणोपासकने मेरा अपमान किया है । यह मालूम नहीं कि मैं किस दु खसे मरूगी" फिर भय त्रास या उद्वेग (व्याकुलता) से युक्त होकर शनैः शनैः बाहर निकलकर जहा अपना घर था वहां गई और वहा पहुचकर उसने अवहत(आर्त्त) यावत् ध्यान लगाया ॥२५६॥

तएणं सा रेवई गाहावइणी अन्तो सत्तरत्तस्स अलसएणं वाहिणा अभिभूया अट्टदुहट्टवसट्टा कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए लोलुयच्चुए नरए चउरासीइवाससहस्सट्ठिइएसु नेरइएसु नेरइयत्ताए उववन्ना ॥ २५७ ॥

तब वह रेवती गृहपत्नी सात रात्रिके मध्यमें अलसक व्याधिसे पीडित हुई २ आर्त और दुःखोंके वशीभूत होकर अपने अवसर पर काल करके रत्नप्रभामें लोलुपाच्युत नरकमें नैरयिकोंके बीचमें उत्पन्न हुई ॥ २५७ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समोसरणं जाव परिसा पडिगया ॥ २५८ ॥

उसकाल उस समय श्रमण भगवान् महावीरजी पधारे नागरिक पुरुष समवसरणमें दर्शनार्थ गये यावत् कथा व्याख्यान सुनकर वापिस चले गये ॥ २५८ ॥

"गोयमा" इ समणे भगवं महावीरे एवं वयासी। "एवं खलु, गोयमा, इहेव रायगिहे नयरे मम अन्तेवासी महासयए नाम समणोवासए पोसहसालाए अपच्छिम मारणन्तियसंलेहणाए झूसियसरीरे, भत्तपाणपडियाइक्खिए काल अणवकङ्खमाणे

विहरइ । तएण तस्स महासयगस्स रेवई गाहावइणी मत्ता जाव विकड्डमाणी २ जेणेव पोसहसाला, जेणेव महासयए तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता मोहुम्माय जाव एवं वयासी तहेव जाव दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी । तएण से महासयए समणोवासए रेवईए गाहावइणीए दोच्च पि तच्चं पि एवं वुत्ते समाणे आसुरत्ते ४ ओहिं पउञ्जइ, २ त्ता ओहिणा आभोएइ, २ त्ता रेवइं गाहावइणि एवं वयासी । जाव " "उववज्जिहिसि" " । नो खलु कप्पइ, गोयमा, समणोवासगस्स अपच्छिम जाव झूसियसरीरस्स भत्तपाणपडियाइक्खियस्स परो सन्तेहि, तच्चेहिं तहिएहि सब्भूएहि अणिट्ठेहि अकन्तेहि अप्पिएहि अमणुणेहि अमणामेहि वागरणेहि वागरित्तए । तं गच्छ णं, देवाणुप्पिया, तुम महासययं समणोवासय एवं वयाहि । " "नो खलु, देवाणुप्पिया, कप्पइ समणोवासगस्स अपच्छिम जाव भत्तपाणपडियाइक्खियस्स परो सन्तेहिं जाव वागरित्तए । तुमे य णं, देवाणुप्पिया, रेवई गाहावइणी सन्तेहिं

४ अणिट्ठेहिं, ५ वागरणेहिं वागरिया । त णं तुम एयस्स ठाणस्स आलोएहि जाव जहारिहं च पायच्छित्त पडिवज्जाहि" " " ॥ २५९ ॥

गौतमजीको श्रमण भगवान् महावीरजी ऐसे बोले । हे गौतम! निश्चयसे इस राजगृह नगरमें मेरा अन्तेवासी महाशत्तक नामक श्रमणोपासक पोषधशालामें अपश्चिम मारणान्तिक अनशन व्रत धारण करके कालकी कांक्षासे रहित विचरता है (एकदा) उस महाशत्तककी रेवती गृहपत्नी कामके वशीभूत होकर, यावत् उत्तरीय (दुपट्टा) को शिरसे उतारकर जहा पोषधशाला और जहा महाशत्तक था वहा जाकर मोह तथा उन्माद वर्धक यावत् स्त्रीभावोको दिखाती हुई महाशत्तक श्रमणोपासकको ऐसे बोली । हे महाशत्तक ! यदि तू मेरे साथ भोग भोगता हुया नहीं विचरता है तो, हे देवानुप्रिय! तुझे धर्म पुण्य स्वर्ग मोक्षसे क्या लाभ होगा? यावत् दो तीनवार फिर वैसेही कहा । तब महाशत्तक श्रमणोपासकने रेवती गृहपत्नीसे दो तीनवार ऐसा कहा जाने पर आशुरक्त (क्रुद्धित) होकर अवधि ज्ञानका प्रयोग किया और ज्ञानद्वारा रेवतीकी भविष्यत् दशाको जानकर ऐसे कहा । "हे रेवती ! तू यावत् सात दिनके अन्दर काल करके यावत् लोलुपाच्युत नरकमें उत्पन्न

होगी" । हे गौतम! अनशन व्रत धारण किये हुये श्रमणो-पासकको अनिष्ट, अकात और अप्रिय वचनोंका भाषण करना उचित नहीं है चाहे वह सत्य, यथार्थ वा सद्भूतही क्यों न हों इसलिये, हे देवानुप्रिय! तू जा और महाशतक श्रमणो-पासकको इस तरह कह । "हे देवानुप्रिय! अनशन व्रत धारण किये हुये श्रमणोपासकको अप्रिय यावत् वचनोंका भाषण करना उचित नहीं है चाहे वह सत्य वा सद्भूतही क्यों न हो परन्तु, हे देवानुप्रिय! तुमने रेवती गृहपत्नीको अनिष्ट वा अप्रिय वचन कहे हैं चाहे वह सत्य, तथ्य वा सद्भूतही थे इसलिये तू उस स्थानकी आलोचना कर यावत् यथायोग्य प्रायश्चित्त ग्रहण कर " " " ॥ २५९ ॥

तएणं से भगवं गोयमे समणस्स भगवओ महा-वीरस्स "तह" त्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेइ, २ त्ता तओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता रायगिहं नयरं मज्झं मज्झेणं अणुप्पविसइ, २ त्ता जेणेव महास-यगस्स समणोवासयस्स गिहे जेणेव महासयए स-मणोवासए तेणेव उवागच्छइ ॥ २६० ॥

तब भगवान् गौतमजी ("तथास्तु" तह–त्ति–तथा इति ऐसा शब्द उच्चारण करके) श्रमण भगवान् महावीरजीकी

बातको विनयसे सुनकर वहासे निकले और राजगृह नगरके मध्यसे चलकर महाशतक श्रमणोपासकके पास उसके गृहमें गये ॥ २६० ॥

तएण से महासयए समणोवासए भगव गोयम एज्जमाण पासइ, २ त्ता हट्ठ जाव हियए भगवं गोयमं वन्दइ नमसइ ॥ २६१ ॥

तव महाशतक श्रमणोपासकने भगवान् गौतमजीको आते हुये देखकर हृदयमें प्रसन्न होकर (यावत्) भगवान् गौतमजीको वदना नमस्कारकी ॥ २६१ ॥

तएण से भगव गोयमे महासयय समणोवासय एव वयासी । "एवं खलु, देवाणुप्पिया, समणे भगव महावीरे एवमाइक्खइ भासइ पएणवेइ परूवेइ । " "नो खलु कप्पइ, देवाणुप्पिया, समणोवासगस्स अपच्छिम जाव वागरित्तए' " । तुमे ण, देवाणुप्पिया, रेवई गाहावइणी सन्तेहि जाव वागरिया । त ण तुम, देवाणुप्पिया, एयस्स ठाणस्स आलोएहि जाव पडिवज्जाहि" ॥ २६२ ॥

तव भगवान् गौतमजी महाशतक श्रमणोपासकको ऐसे बोले । "हे देवानुप्रिय! निश्चय करके श्रमणभगवान् महा-

वीरजीने ऐसे भाषण, प्रतिपादन वा प्ररूपण किया है । ,, "हे देवानुप्रिय ! अनशन व्रत धारण किये हुए श्रमणोपासको अप्रिय, यावत् वचन भाषण करने उचित नहीं हैं चाहे वह सत्य वा सद्भूतही क्यों न हों" " । परन्तु हे देवानुप्रिय ! 'तूने रेवती गृहपत्नीको अप्रिय यावत् शब्द कहे हैं चाहे वह सत्य यावत् सद्भूतही थे इसलिये हे देवानुप्रिये ! तू इस स्थानकी आलोचना कर यावत् दण्ड ग्रहण कर ॥ २६२॥

तएणं से महासयए समणोवासए भगवओ गोयमस्स "तह" त्ति एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेइ, २ त्ता तस्स ठाणस्स आलोएइ जाव अहारिहं च पायच्छित्तं पडिवज्जइ ॥ २६३ ॥

तब महाशतक श्रमणोपासकने भगवान् गौतमजीकी ("तथास्तु" ऐसा वचन कहकर) इस बातको विनयसे सुनकर उस स्थानकी आलोचनाकी यावत् यथायोग्य ,प्रायश्चित्त ग्रहण किया ॥ २६३ ॥

तएणं से भगवं गोयमे महासयगस्स समणोवासयस्स अन्तियाओ पडिणिक्खमइ, २ त्ता रायगिहं नगरं मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, २ त्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, २ त्ता समणं

भगव महावीर वन्दइ नमंसइ, २ त्ता सजमेण तव-सा अप्पाण भावेमाणे विहरइ ॥ २६४ ॥

तब भगवान् गौतमजी महाश्रावक श्रमणोपासकके पाससे निकलकर, राजगृह नगरके मध्यसे जाते हुये जहा श्रमण भगवान् महावीरजी थे वहा गये, पश्चात् श्रमण भगवान् महावीरजीको वन्दना नमस्कार करके, सयम और तपसे अपना कल्याण करते हुये विचरने लगे ॥ २६४ ॥

तएण समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ रायगिहाओ नयराओ पडिणिक्खमइ, २ ता वहिया-जणवय विहार विहरइ ॥ २६५ ॥

तब श्रमण भगवान् महावीरजी राजगृह नगरसे निकल-कर अन्यदा समय किसी अन्य देशको विहार कर गये ॥२६५॥

तएण से महासयए समणोवासए बहूहिं सील जाव भावेत्ता वीस वासाइं समणोवासग परियाय पाउणित्ता एक्कारस उवासगपडिमाओ सम्म काएण फासित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइ-अणसणाए छेदेत्ता आलोइय पडिक्कन्ते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे

अरुणवडिसए विमाणे देवत्ताए उववन्ने । चत्तारि पलिओवमाइं ठिई । महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ॥ २६६ ॥

तब उस महाशतक श्रमणोपासकने बहुत शीलव्रत (यावत्) से अपना कल्याण किया, २० वर्षतक श्रमणोपासकके धर्मको पाला उपासककी एकादशही प्रतिज्ञाओंको सम्यक् प्रकारसे काया से आराधन किया एक मासतक संलेखनाकी जूषणाको जूषित करके, और अनशन व्रत धारण करके आलोचनाकी और प्रतिक्रमण किया, तब समाधि प्राप्त करके, अवसरपर मृत्युको प्राप्त होकर सौधर्म कल्पमें अरुणावतंसक विमानमें देवता उत्पन्न हुआ जहा चार पल्योपमकी स्थिति है। देवलोकसे आयु, भव और स्थिति क्षय करके यह महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होगा ॥ २६६ ॥

॥ निक्खेवो ॥

निक्षेप ।

सत्तमस्स अङ्गस्स उवासगदसाणं अट्ठमं अज्झयणं समत्तं ॥

सप्तमाङ्ग उपासकदशाका अष्टम अध्ययन समाप्त हुआ ॥

नवमं अज्झयणं ॥

॥ नवम (९ वा) अध्ययन ॥

॥ नवमस्स उक्खेवो ॥

॥ नवम अध्ययनका उत्क्षेप ॥

एवं खलु, जम्बू, तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थी नयरी। कोट्ठए चेइए। जियसत्तू राया॥२६७॥

हे जम्बू! उसकाल उससमय श्रावस्ती नामिका एक नगरी थी उसके निकट कोष्टक उद्यान था। जितशत्रु राजा वहां राज्य करता था ॥ २६७ ॥

तत्थणं सावत्थीए नयरीए नन्दिणीपिया नामं गाहावई परिवसइ अड्ढे। चत्तारि हिरणकोडीओ निहाणपउत्ताओ चत्तारि हिरणकोडीओ वड्ढिपउत्ताओ चत्तारि हिरणकोडीओ पवित्थर पउत्ताओ चत्तारि वया दसगोसाहस्सिएणं वएणं। अस्सिणी भारिया ॥ २६८ ॥

उस श्रावस्ती नगरीमें नन्दिनीपिता नामक एक गाथापति रहता था जो अपनी जातिमें अति धनवान् था। चार करोड स्वर्णमुद्रा निधानप्रयुक्त, चार करोड स्वर्ण मुद्रा वृद्धि-

प्रयुक्त, चार करोड स्वर्ण मुद्रा प्रविस्तर प्रयुक्त और (दश सहस्र गायके एक वर्ग जैसे) चार वर्ग उसके पास थे। अश्विनी नामा उसकी भार्या थी ॥ २६८ ॥

सामी समोसढे। जहा आणन्दो तहेव गिहिधम्मं पडिवज्जइ। सामी वहिया विहरइ ॥ २६९ ॥

उससमय श्रमण भगवान् महावीरजी पधारे तब नन्दिनीपिताने आनन्द सुश्रावकके समान उसीप्रकारही गृहस्थधर्मको अङ्गीकार किया कुछ कालके पश्चात् भगवान् अन्य देशको विहार कर गये ॥ २६९ ॥

तएणं से नन्दिणीपिया समणोवासए जाए जाव विहरइ ॥ २७० ॥

तब जीवाजीवज्ञ नन्दिनीपिता श्रमणोपासक यावत् मुनियोंको प्राशुक एषणीय पदार्थ (अन्न, वस्त्र, भाजन, पात्रादि) प्रदान करता हुआ विचरने लगा ॥ २७० ॥

तएणं तस्स नन्दिणीपियस्स समणोवासयस्स बहूहिं सीलवयगुणे जाव भावेमाणस्स चोद्दस संवच्छराइं वइक्कन्ताइं। तहेव जेट्ठं पुत्तं ठवेइ। धम्मपण्णत्ति। वीसं वासाइं परियागं। नाणत्तं अरुणगवे विमाणे उववाओ। महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ॥ २७१ ॥

तब नन्दिनीपिता श्रमणोपासकको शीलव्रत और गुणव्रत यावत् पालन करते हुये चतुर्दश (१४) वर्ष व्यतीत हो गये। उसने उसीतरह अपने ज्येष्ठ पुत्रको अपने घरमें मुख्य स्थापित किया। और स्वय ग्रहण किये हुये धर्म्मको पालता हुआ विचरने लगा। बीस वर्षतक उसने श्रावककी पर्यायको पाला यावत् अरुणगवनिमानमें देवता उत्पन्न हुआ। देवलोकसे आयु क्षय करके महाविदेह क्षेत्रमें सिद्ध होगा ॥ २७१ ॥

॥ निक्खेवो ॥

॥ निक्षेप ॥

उवासगदसाए नवम अज्झयण समत्त ॥

उपासक दशाका नवम अध्ययन समाप्त हुआ ॥

॥ दसम अज्झयण ॥

(दशम अध्ययन)

॥ दसमस्स उक्खेवो ॥

दशम अध्ययनका उत्क्षेप ॥

एव खलु, जम्बू, तेणं कालेण तेण समएणं सावत्थी नयरी। कोट्ठए चेइए। जियसत्तू राया ॥२७२॥

हे जम्बू! निश्चयसे उसकाल उससमय श्रावस्ती नगरी थी।

(उसके पास) कोष्ठक उद्यान था । जितशत्रु वहाका अ-धिपति था ॥ २७२ ॥

तत्थणं सावत्थीए नयरीए सालिहीपिया नामं गाहावई परिवसइ अड्ढे दित्ते । चत्तारि हिरणकोडीओ निहाण पउत्ताओ चत्तारि हिरणकोडीओ वड्ढि पउत्ताओ चत्तारि हिरणकोडीओ पवित्थर पउत्ताओ चत्तारि वया दसगोसाहस्सिएण वएणं । फग्गुणी भारिया ॥ २७३ ॥

उस श्रावस्ती नगरीमें सालिहीपिता नामक गृहपती रहता था जो अपनी जातिमें महाधनी वा धनधान्य युक्त था । चार करोड स्वर्ण मुद्रा निधान प्रयुक्त, चार करोड स्वर्ण मुद्रा वृद्धि प्रयुक्त, चार करोड स्वर्ण मुद्रा प्रविस्तर प्रयुक्त और (दशसहस्र गौका एक वर्ग ऐसे) चार वर्ग उसके पास थे । उसकी प्रियाका नाम फल्गुनी था ॥ २७३ ॥

सामी समोसढे । जहा आणन्दो तहेव गिहिधम्मं पडिवज्जइ । जहा कामदेवो तहा जेट्ठं पुत्तं ठवेत्ता पोसहसालाए समणस्स भगवओ महावीरस्स धम्मपण्णत्तिं उवसम्पज्जित्ताणं विहरइ । नवरं निरुवसग्गाओ एक्कारस वि उवासगपडिमाओ तहेव भाणि-

यवाओो । एव कामदेवगमेएा नेयव जाव सोहम्मे कप्पे अरुणकीले विमाणे देवत्ताए उववन्ने । चत्तारि पलिओवमाइ ठिई । महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ ॥ २७४ ॥

वहा स्वामीजी पधारे । सालिहीपिताने आनन्दके समान उसीप्रकारही गृहस्थधर्मको अगीकार किया । कामदेव श्रमणोपासकके समान ज्येष्ठपुत्रको गृहमें मुख्य स्थापित करके पोषधशालामें श्रमण भगवान् महावीरजीके पास ग्रहण किये हुये धर्मको पालता हुआ विचरने लगा । इतना विशेष कि उसको कोई उपसर्ग नहीं हुआ एकादशही उपासककी प्रतिज्ञाओंको सम्यक् प्रकारसे कायासे पाला (उसीप्रकार आगे कहना चाहिये) । ऐसेही कामदेवके समान (श्रावककी पर्यायको पाला यावत् मृत्यु पाकर) सौधर्मकल्पमें अरुणकील विमानमें देवता उत्पन्न हुआ । वहा चार पल्योपमकी स्थिति है । (देवलोकसे च्युतहोकर) महाविदेहक्षेत्रमें सिद्ध होगा ॥ २७४ ॥

दसराह वि पणारसमे संवच्छरे वट्टमाणाण चिन्ता । दसराह वि वीसं वासाइ समणोवासय परियाओ ॥ २७५ ॥

दशही श्रावकोंको पद्रहवें वर्षके मध्यमें धर्मका विचार उत्पन्न हुआ। दशही श्रावकोंने वीस वर्षतक श्रमणोपासककी पर्यायको पाला ॥ २७५ ॥

एवं खलु, जम्बू, समणेण जाव सम्पत्तेण सत्तमस्स अङ्गस्स उवासगदसाण दसमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ॥ २७६ ॥

हे जम्बू! निश्चयसे मोक्षगत भगवान् महावीरजीने सप्तम अङ्ग उपासक दशाके दशम अध्ययनके यह अर्थ कहे हैं॥२७६॥

॥ उवासगदसाओ समत्ताओ ॥

॥ उपासकदशा समाप्त हुआ ॥

निम्नलिखित ग्रन्थ विक्रयार्थ तय्यार है

जिनको

जैनाचार्य्या श्री १००८ श्री पार्वतीजी महाराजने
निर्माण किया है

सम्यक्त्वसूर्य्योदय

अर्थात्

मिथ्यात्वतिमिरनाशक

यह ग्रन्थ आद्योपान्त विचारपूर्वक निष्पक्षपात दृष्टिसे अवलोकन करनेवाले श्रेष्ठ पुरुषोंको मिथ्याभ्रमरूप रोग के विनाश करने के लिये औषधरूप उपकारी होगा इस ग्रन्थमें ईश्वर को कर्ता अकर्ता मानने के विषय में १५ प्रश्नोत्तर हैं जिनमे ईश्वर को कर्ता मानने मे चार दोष दिखाये गये हैं और कर्म को कर्ता मानने के विषयमें पक्षा धैज्ञान अर्थात् जीवका और पुरुषका स्वरूप युक्तियों से सिद्ध किया गया है और जो वेदानुयायी ब्राह्मण वैष्णवादि हैं वह तो आवागमनसे रहित होने को मोक्ष मानते हैं परन्तु जो नवीन वेदानुयायी दयानन्दी' वर्ग है वह मोक्षको भी आवागमन में दाखिल करते हैं इस विषयका भी यथामति युक्तियों द्वारा खण्डन किया गया है इसके अतिरिक्त वेदान्ती अद्वैतवादी नास्तिकों के विषय में बीस प्रश्नोत्तर हैं जिनमे द्वैतभाव और आस्तिकता सिद्ध की गई है अन्य मतानुयायियो ने जो २ आजतक जैन धर्म पर आक्षेप किये हैं उनका उत्तर उन्हीं के ग्रन्थों के अनुसार दिया गया है

यह पुस्तक अत्युत्तम मोटे अक्षरों मे छपा हुआ है जिल्द अति सुन्दर है

मूल्य केवल १) एक रुपया मात्र है

ज्ञानदीपिका

अर्थात्

जैनोद्योत

इस ग्रन्थमें स्वमत, परमत तथा देवगुरु धर्म का कथन और चतुर्गतिरूप संसार का अनित्य स्वरूपादिक उपदेश है और दया क्षमा आदि ग्रहणरूप शिक्षायें हैं

इस पुस्तक के दो भाग हैं प्रथम भागमें मुनि आत्मारामजी संवेगी रचित जैन तत्वादर्श ग्रन्थमें जो २ शास्त्रों से विरुद्ध अर्थात् सूत्रों से अनमिलत कथन हैं उनका सम्यक् प्रकार से अकाट्य युक्तियों द्वारा खण्डन किया गया है द्वितीय भाग में जैनधर्म अर्थात् क्षमा दयारूप जो सत्य धर्म है उसकी पुष्टता है इस भाग के पढने से स्वमत और परमत का बहुत अच्छा बोध हो जाता है यह आवृत्ति खतम होनेपर कागजकी तेजीके कारण ग्रन्थ मिलना दुर्लभ हो जावेगा यह पुस्तक उत्तम विलायती कागज पर सुन्दर मोटे अक्षरों में छपी हुई है सुन्दर कपडे की जिल्द बंधी हुई है पृष्ठ भी ३०५ हैं मूल्य केवल ।।।) है

सत्यार्थचन्द्रोदय

इस पुस्तक में प्राचीन जैनधर्म (आत्माभ्यासी स्थानकवासी मतका) यथोक्तरूपसे सूत्रोंद्वारा केवल सविस्तर वर्णनही नहीं किया वरंच सूत्र प्रमाण, कथा उदाहरण तथा युक्ति आदिसे सर्व साधारण के हस्तामलक कराने में किंचित् त्रुटि नहीं की वरंच निक्षेपमूर्ति, भाव निक्षेप, मूर्तिपूजननिषेध, चैत्य शब्द वर्णन साधु साध्वियों के शास्त्रोक्त आचरण या लक्षण वर्णन करने के अतिरिक्त प्रश्नोत्तर की रीतिपर पूर्णरूपसे श्वेताम्बराम्नाय, पीताम्बर धारियों के नवीनमार्ग का मूल सूत्रों, माननीय जैन ऋषियों के मन्तव्यों तथा प्रबल युक्तियोंसे खण्डन किया है और युक्तियें भी ऐसी प्रबल दी हैं कि जिनको जैन

धर्म्मारूढ नवीन मतावलम्बियों के सिवाय अन्य साम्प्रदायिक भी खडन नहीं कर सके वरच बडे २ विद्वानो ने भी श्लाघा की है इस पुस्तक में विशेष करके श्रीआत्मारामजी सवेगी कृत जेनमार्गप्रदर्शक नवीन कपोल कल्पित ग्रन्थों की पूर्ण आन्दोलना की है अधिक क्या लिखें इस पुस्तक में मूर्तिपूजा का बडी २ अकाट्य युक्तीयों के द्वारा खूब अच्छी तरह खण्डन किया गया है सर्व जनों को उचित है कि इसको पढकर सत्यासत्य का निर्णय करें यह पुस्तक मोटे कागज पर मोटे अक्षरों में छपकर तय्यार हुआ हैं पृ २२८ हैं विलायती कपडे जिल्द सहितदाम ॥) मात्र है

पद्मचन्द्रकोष.

अर्थात्

व्युत्पत्तिविषयसहित सस्कृत–भाषाकोष

द्वितीयावृत्ति.

इसमे ७० हजार सस्कृत शब्द प्रकृतिप्रत्ययसहित भाषा मे वर्णन है जिसको

श्रीमान् पडित गणेशदत्त शास्त्री प्रोफेसर

ओरियटल कालिज लाहोर ने निर्माण किया है

यह पुस्तक जगत् प्रसिद्ध निर्णयसागर मुम्बई छापेखाने में अतिउत्तम कागज पर छपा है, और गवर्नमेण्ट ने इस कोष की बडी २ प्रसिद्ध लाईब्रेरियों और कालिजों में एक २ कापी खरीद कर रक्खी है।

इस कोष पर बडे २ युरोप और भारत के प्रसिद्ध विद्वानों ने भी सर्वोत्तम सम्मतिये दी हैं, मूल्य केवल ३) मात्र है महसूल डाक ।=)

प्राकृतव्याकरण.

इग्लण्डीय भाषानुवाद सहित श्रीहृषीकेश भट्टाचार्य सकलित

मूल्य १॥)

श्री भगवान् वर्द्धमान (महावीर) स्वामी जी महाराजका सरल हिन्दी भाषामें जीवनचरित्र

प्रत्येक जैनी को अपने पास रखना चाहिये

इस पुस्तक को (पंजाबी) श्री श्री श्री १००८ उपाध्याय आत्माराम जी महाराज के शिष्य (स्वर्गवासी) जैन मुनि पं० ज्ञानचन्द्र जी महाराज ने अति परिश्रम से तय्यार किया है।

प्रिय पाठक गण ! यद्यपि इस संसार में मनुष्य मात्र को अपना सदाचार पालन और तत्वज्ञान की प्राप्ति के लिये सत्संग और सच्छास्त्र रूप दोही मुख्य उपाय हैं तथापि महात्मापुरुषों का जीवन चरित्र पढने से हृदय में एक ऐसा अलौकिक भाव उत्पन्न होता है कि मनुष्य तुरन्त ही महात्माओं के सदाचारका अनुसरण करके शान्ति लाभ कर सक्ता है। महात्माओं के चरित्र को भी यदि सच्छास्त्र कहें तो अत्युक्ति न होगी। उक्त आशय को पूर्ण करने के लिये हम आपको अर्हत् भगवान् श्री १००८ वर्धमान [महावीर] स्वामी जी महाराजका जीवनचरित्र लागत के मोल पर भेट करते हैं आशा है कि आप उस विचित्र चरित्र को सावधानी से आद्यन्त पढकर पुरुषार्थचतुष्टय को लाभ कर सकेंगे।

श्री भगवान् ने बहत्तर (७२) वर्ष की अवस्था तक इस धराधाम को अपनी पवित्र अमृतमयी वाणी से पवित्र किया स्वयं सत्यमार्ग पर आरूढ होकर लाखों प्राणियों को सत्यमार्ग पर आरूढ कराया अधिक क्या लिखा जावे इस जीवनचरित्र में क्रम से अन्ततक सम्पूर्ण विषयों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

हे सज्जनो ! यदि आप आत्मवाद, कर्मवाद, जीवतत्व वा अजीव-त्व आदि का पूर्ण निश्चय किया चाहते हैं तो इस पुस्तक में लिखी हुई श्री भगवान् महावीर जी की उपदेशामृततरंगिणी में स्नान करके कृतार्थ हो जाओ।

विदित हो कि इस पुस्तक में किसी भी मत का खण्डन अथवा मंडन दृष्टि मात्र भी नहीं किया गया है इस कारण यह पुस्तक प्रत्येक जैनी को निष्पक्षपात दृष्टि से अवलोकन करने योग्य है जैनों के लिये यह ग्रन्थ एक मात्र रत्नों का भण्डार और जीवन का सार तो है ही परन्तु साधारन नर नारी भी इस विचित्र रत्न द्वारा सदाचार और विज्ञान के धनी होसके हैं

यह पुस्तक मुम्बई के सुप्रसिद्ध "निर्णयसागर" प्रेसमें बहुत उत्तम विलायती कागजपर सुन्दर मोटे अक्षरों में अभी छपकर तयार हुआ है कागज की तेजीके कारण प्रति बहुत थोडी छपी हैं इसलिये शीघ्र मगाईये नहीं तो पीछे पछताना पडेगा कुलपृष्ठ १५० हैं विला-यती कपडे की जिल्द भी बधी हुई है इसके अतिरिक्त कर्ता का बहुत सुन्दर चित्र भी पुस्तकमें लगा हुआ है परन्तु मूल्य केवल ॥।) बारह आने मात्र है

उपर लिखे पुस्तक मिलनेका पता —

मेहरचन्द लक्ष्मणदास जैन,

संस्कृत पुस्तकालयाध्यक्ष लाहौर

सर्व प्रकारके जैनपुस्तक मिलनेका पता -

मैनेजर—श्रीअमरजैनपुस्तकालय,

सैद मिट्ठा बाजार,